बिनती

बार बार करूं बीनती, राधास्वामी आगे।
दया करो दाता मेरे, चित चरनन लागे।। 1।।
जन्म जन्म रही भूल में, नहिं पाया भेदा।
काल करम के जाल में, रही भोगत खेदा।। 2।।
जगत जीव भरमत फिरें, नित चारों खानी।
ज्ञानी जोगी पिल रहे, सब मन की घानी।। 3।।
भाग जगा मेरा आदि का, मिले सतगुरू आई।
राधास्वामी धाम का, मोहिं भेद जनाई।। 4।।
ऊँचे से ऊँचा देश है, वह अधर ठिकानी।
बिना संत पावे नहीं, सुर्त शब्द निशानी।। 5।।
राधास्वामी नाम की, मोहिं महिमा सुनाई।
विरह अनुराग जगाय के, घर पहुंचू भाई।। 6।।
साध संग कर सार रस, मैंने पिया अघाई।
प्रेम लगा गुरू चरन में, मन शान्ति न आई।। 7।।
तड़प उठे बेकल रहूं, कस पिया घर जाई।
दरशन रस नित नित लहूं, बहे मन थिरताई।। 8।।
सुरत चढ़े आकाश में, करे शब्द बिलासा।
धाम धाम निरखत चले, पावे निज घर बासा।। 9।।
यह आशा मेरे मन बसे, रहे चित्त उदासा।
विनय सुनो किरपा करो, दीजे चरन निवासा।। 10।।
तुम बिन कोई समरथ नहीं, जासे मांगू दाना।
प्रेम धार वर्षा करो, खोलो अमृत खाना।। 11।।
दीन दयाल दया करो, मेरे समरथ स्वामी।
शुकर करूं गावत रहूं, नित राधास्वामी।। 12।।

VISIT US ON:
www.akhandmanavtadham.in

सतसंग परम संत परम दयाल
पं0 फकीर चन्द जी महाराज

(10 जुलाई 1976 होशियारपुर)

(गुरू पूर्णिमा)

शब्द

सुनो मेरी विनती गुरू दाता।
तुम तो आये जीव उबारन, दया क्षमा के काजा।
जो नहीं मेरा काम बनाओ, नाम को आवे लाजा।।
मो सम दुष्ट नहीं कोई दूजा, दम्भी मानी गुमानी।
दुखी जान कर गले लगाओ, प्रेम भक्ति दे दानी।।
दुख क्लेश ने चहुं ओर घेरा, मुझसे दुखी न कोई।
मुझे तार लो जब मैं जानूं, पतित अधम गति सोई।।
भलों को तारन तुम नहीं आये, तुम्हें बुरे हैं प्यारे।
इनकी लाज तुम्हारे हाथ है, तुम इनके रखवारे।।
राधास्वामी दीन दयाला, दीनन के हितकारी।
बांह गहो दुख मेटो काटो, काल का बंधन भारी।।

राधास्वामी!

आप यहां गुरू पूर्णिमा के सिलसिले में आये हैं। यह आपने भी सुना और मैंने भी। मेरा अपना जीवन मेरे सामने है। मैंने छोटी आयु में कुछ गलतियां की। उदाहरण के तौर पर छः महीने तक मैंने मांस खाया, तीन बार शराब पी और एक बार वैश्या के पास भी गया। इसके सिवाय यदि मैंने कुछ पाप किया होगा, तो मुझे याद नहीं। जो ये चार पाप मैंने किये, इनके कारण मेरा मन दुखी रहता था। मैं राम को मिलने निकला, ताकि मेरे पाप धुल जायें। इस सिलसिले में मौज मुझे दाता दयाल जी के चरणों में ले गई। उन्होंने मुझे शिक्षा दी और मेरे जिम्मे कर्त्तव्य लगाया कि मैं चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाऊँ। मैंने सन्तमत की वाणियां पढ़ीं। उनमें जो दूसरे मतों तथा धर्मों का खंडन किया गया था, उसको मेरी आत्मा सहन नहीं करती थी। परन्तु दाता दयाल जी महाराज में मेरा विश्वास नहीं टूटता था। मैं उनको छोड़ नहीं सकता था।

उस समय मैंने प्रण किया था कि मैं सच्चा होकर इस मत पर चलूंगा और जो कुछ मुझे अनुभव होगा, वह मैं संसार को बता जाऊँगा। मेरे मन में एक सवाल पैदा हुआ कि यह जो जीव पुकार करता है और उसके अन्दर जो तड़प है और जीव जो अपने अन्दर निर्बलता महसूस करता है क्या इसको दूर किया जा सकता है?

सुनो मेरी विनती गुरू दाता।
तुम तो आये जीव उबारन, दया क्षमा के काजा।
जो नहीं मेरा काम बनाओ, नाम को आवे लाजा।।

मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं "ऐ फकीर! तूने जो अपने आपको संत सद्गुरू कहा है, वह अहंकार में आकर कहा है, या गुरू–आज्ञावश, या अपना कर्म भोगने के लिए? अब तू ही बता कि क्या तुम जीवों को उभार सकते हो?" ऐ मेरी आत्मा! तू सोच "मैं जीवों को कैसे उभार सकता हूं? मैं प्रार्थना किया करता था और अब भी करता हूं। अब भी जब गुरू–ज्ञान को भूल जाता हूं, तो दुखी हो जाता हूं। वह गुरू–ज्ञान है क्या? हो सकता है कि जो गुरू–ज्ञान मैंने समझा है, वह गलत हो। मुझे किसी बात का कोई दावा नहीं है।

मैं अमेरिका गया। ढ़ाई महीने के बाद, जब मैं वापिस आया, तो पता चला कि मेरे मित्र श्री मंगल सैन (जो कुछ साल पहले चोला छोड़ गये थे) की स्त्री का भी देहान्त हो गया। सन्त सेवासिहं, दिल्ली वाले, मेरे बड़े ही प्रेमी थे, वह भी चोला छोड़ गये। ठाकुर शंकर सिंह जी सेक्रेटरी राधास्वामी सत्संग हनमकुण्डा भी पूरे हो गये थे और देवीचरण मित्तल, सम्पादक "मनुष्य बनो" भी इस संसार से चल बसे थे। मित्तल के लड़के ने मुझे बताया कि मरने से बारह दिन पहले देवीचरण मित्तल मेरी फोटो को देखते रहते थे और प्रार्थना करते रहते थे। आखिरी दो दिन, जब उनकी जुबान बन्द हो गई, फिर भी वह अन्तिम समय तक मेरी फोटो को देखते रहे। मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं, "जब देवीचरण मित्तल मेरी फोटो को देखता था और प्रार्थना करता था और जब वह मर गया, तो क्या अमेरिका में बैठे हुए तुम्हें यह पता चला कि देवी चरण मित्तल मेरी फोटो को देखता है और प्रार्थना करता है? क्या तुम्हें इसका कोई ज्ञान था कि वह मर चुका है? नहीं न?" ऐसे एक नहीं अनेक

आदमी हैं, जो यह कहते हैं कि जब वे मेरा ध्यान करते हैं और मुझे याद करते हैं, तो मेरा रूप उनके अन्दर प्रकट होता है और उनके काम कर जाता है। परन्तु मुझे तो इसका पता ही नहीं होता। इस रहस्य ने मुझे गुरूमत की बड़ाई प्रकट की।

सुनो मेरी विनती गुरू दाता।
तुम तो आये जीव उबारन, दया क्षमा के काजा।।

इसकी मुझे समझ आ गई। मैंने अपने आपको सन्त सद्गुरू कहा है। सोचता हूं कि क्या मैं किसी को उभार सकता हूं? यदि उभार सकता हूं तो कैसे? उभारना क्या है? एक आदमी, जब किसी विचार में डूबा हुआ है, या किसी विचार से बंधा हुआ है, उस व्यक्ति को असलियत बता कर, उस विचार से जुदा कर देना ही उबारना है। सभी लोग अपने मन के चक्कर में फंसे हुये हैं, वे मन से दुखी होते हैं, मन से सुखी होते हैं। मन से ही 'हाय' 'हाय' करते हैं और मन से ही आजाद होते हैं। श्री देवीचरण मित्तल मर गया। वह मुझे याद करता था, परन्तु मुझे इसका पता ही नहीं था। सम्भव है कि उसको शान्ति मिलती हो, परन्तु मुझे कोई पता नहीं कि वह कहां गया। मैंने यह काम क्यों किया? इस समय, गुरूमत या राधास्वामी मत में, गुरू लोग यह विचार देते हैं कि 'नाम दान' ले लो। तुम्हारे अन्त समय पर गुरू आयेगा और तुम्हें सत्लोक ले जायेगा। यह एक ऐसा धोखा और फरेब है कि जीव बेचारे इस धोखे में आकर लूटे जा रहे हैं। 'गुरू' नाम है समझ, विवेक और ज्ञान का। आप लोग गुरू पूर्णिमा पर यहां आये हैं। मैं समय का सन्त सद्गुरू हूं अपना कर्त्तव्य पूरा कर जाना चाहता हूं। तुम्हारी समझ में मेरी बात आये या न आये, मुझे इस बात की परवाह नहीं। **मनुष्य के अन्दर जब कोई अच्छा या बुरा विचार या संकल्प फुरता है तो वह उसके मस्तिष्क पर पड़े हुए संस्कार के कारण ही फुरता है और आदमी की सुरत उस विचार में फंस जाती है।** इसलिए सच्चा गुरू वह है, जो आदमी की सुरत को मन के चक्कर से निकाल दे। जब तक कोई भी व्यक्ति मन के चक्कर में फंसा हुआ है, वह सुख–दुख, हर्ष–शोक से बच नहीं सकता। मैं इस संसार से अपनी आत्मा पर धोखे का या फरेब का बोझ लेकर नहीं जाना चाहता।

मो सम दुष्ट नहीं कोई दूजा, दम्भी मानी गुमानी।

यह दुष्टपना मन ही का काम है। मैं राम तथा कृष्ण को मानने वाला

था। मौज मुझे सन्तमत में ले आई। पहले मुझे इस मत की समझ नहीं आती थी और मैं दाता को तंग किया करता था कि मुझे गुरूमत की यह बात बताओ, वह बात बताओ। अब समझ में आया कि जब तक कोई व्यक्ति मन के चक्कर में है, वह लाख प्रयत्न करे, पर वह नेकी–बदी, पाप–पुण्य और सुख–दुख से बच नहीं सकता, क्योंकि मन का काम ही यही है। मन के चक्कर में न पड़ने के लिए, या मन से दूर, मन से परे जाने का एकमात्र साधन 'नाम' है।कोई 'राधास्वामी' नाम जपता है, कोई पंचनाम जपता है तो कोई 'राम' 'राम', कोई अल्लाहू जपता है, तो कोई 'वाहे गुरू'। जब तक कोई नाम जपता है वह नाम से दूर है, इसलिए कि यह नाम असली नाम नहीं है। असली नाम क्या है?

नाम रहेचौथे पद मांहीं, ये ढूंढे तिरलोकी मांही।

शरीर मन और प्रकाश से परे नाम है। नाम की असलियत को न समझ कर हम एक दूसरे से लड़ते मरते रहते हैं। कोई कहता है कि 'राधास्वामी' नाम बड़ा है, कोई कहता है, सतनाम बड़ा है। सभी अपने–अपने नामों को बड़ा समझते हैं। भई! न कोई बड़ा है न छोटा है। नाम तो एक अवस्था है। उसमें बड़ाई और छुटाई कैसी?**जब तक मनुष्य मन से ऊपर या परे नहीं जाता, वह नाम में नहीं जा सकता।** मैं भी बहुत समय तक मन के चक्कर से निकल नहीं सका। केवल एक विचार से कि मेरा रूप लोगों के अन्दर प्रकट होता है, उनको बीमारी में दवाइयां बता जाता है, पुत्र दे जाता है और कई प्रकार के चमत्कार कर जाता है, लेकिन मैं वहां नहीं होता, तो मुझे इस बात की समझ आ गई कि ये जो रूप रंग अन्तर में प्रकट होते हैं, ये केवल मस्तिष्क पर पड़े हुए संस्कार मात्र ही होते हैं। इनकी असलियत कुछ नहीं। इस बात को समझ जाने के बाद, मैं मन को छोड़ कर आगे जाने के लिए विवश हो गया।अमेरिका में भी बहुत से लोग मेरा ध्यान करते हैं। उनके काम हो जाते हैं, परन्तु मुझे इसका कुछ पता नहीं होता। मैं यह काम क्यों कर रहा हूं? क्योंकि यह मेरा कर्त्तव्य है जो दाता दयाल जी ने मुझे करने के लिए कहा। इस समय मेरी आयु 90 वर्ष की है, लेकिन गुरू आज्ञावश इस बुढ़ापे में देश–विदेश धक्के खा रहा हूं।

कल गुरू पूर्णिमा है और इस अवसर पर आप गुरू की पूजा करते हैं। गुरू की पूजा केवल धन दे देने से नहीं हो जाती। यह लेना–देना तो संसार का व्यवहार है। यदि रूपये देने से रूहानियत मिल

जाती, तो बड़े–बड़े सेठ तथा धनी व्यापारी सब भवसागर से पार हो जाते। लेने देने का सम्बन्ध तो मन से है। जो आपने दिया हुआ है, वही आपको मिलता है। मैं लेने देने के विरूद्ध नहीं हूं, लेकिन यदि इससे तुम लोग यह समझो कि तुम सदा के लिए इस चक्कर से निकल जाओगे, तो यह असंभव है।

आप लोग आये हैं, मैं आपके प्रति अपने कर्त्तव्य को पूरा कर देना चाहता हूं। मैं यह कहना चाहता हूं, "ऐ मानव! तू मन के चक्कर से निकल।" मैं भी जब गुरू–ज्ञान को भूल जाता हूं, तो मन के चक्कर में आ जाता हूं, लेकिन फिर सम्हल जाता हूं। गुरू क्या करता है? गुरू नाम देता है। परन्तु आजकल के गुरूओं ने बहुत बड़ा जाल फैला रखा है। वे भोले भाले लोगों को यह विचार देते हैं कि नाम ले लो, आपके मरने के वक्त गुरू आपको लेने आयेगा। यह सरासर झूठ और धोखा है। इसलिए मैं किस को नाम नहीं देता। मेरा नाम तो चौथे पद का है और उसको केवल वह ही लेगा, जिसका समय आ गया है। अब में 'क, ख, ग' नहीं पढ़ा सकता। मैंने 'नाम दान' देकर क्या करना है? मै तो वह नाम देता हूं, जिससे आदमी मन के चक्कर से निकल जाये।

राधास्वामी दीन दयाला, दीनन के हितकारी।
बांह गहो दुख मेटो काटो, काल का बन्धन भारी।।

वह कौन सा दुख है, जिसको गुरू ने काटना है? मैंने बहुत से सन्तों तथा गुरूओं के जीवन के हालात पढ़े और देखे हैं। सिवाय कुछ ऐक के सबने बीमारियों में घोर कष्ट उठाये। कुछ एक का तो बहुत अपमान भी हुआ। तो फिर गुरूमत क्या है? मैं नककटों में शामिल नहीं हुआ। मैं हर एक वस्तु को क्रियात्मक (Practical) रूप से देखना चाहता हूं। एक गुरू महाराज ने अपने ग्रन्थ में लिख दिया कि प्रभु का सुमिरन करने से बैरी भी बैर भाव को छोड़ देता है। मगर उन गुरू महाराज के भाई ने उनके साथ हमेशा बैर भाव ही रखा। यदि प्रभु के सुमिरन से बैरी बैर भाव छोड़ देते होते, तो गुरू महाराज के भाई ने उनसे शत्रुता क्यों नहीं त्यागी? इससे यह भ्रम पैदा होता है कि या तो उन गुरू महाराज ने प्रभु सुमिरन किया ही नहीं, यदि किया है, तो प्रभु सुमिरन के बारे में जो कुछ उन्होने लिखा है वह गलत है। मैं

चाहता हूं कि मेरा यह भ्रम दूर हो।

श्रीमद्भागवत कहती है कि अर्जुन कुछ समय के लिए नरक में गया और युधिष्ठर भी ढ़ाई घड़ी के लिए नरक में गया। अर्जुन ने गीता के अठारह सत्संग श्री कृष्ण के मुखारविन्द से सुने थे। यदि अठारह सत्संग श्री कृष्ण जी के मुख से सुनने के बाद भी वह नरक में गया, तो फिर हम लोग किधर जायेंगे? मैं किसी मत का खण्डन नहीं करता और न ही नुक्ताचीनी करता हूं। मैं भ्रम में हूं और चाहता हूं कि मेरा भ्रम दूर हो जाय। मैं कहता हूं, "ऐ मानव! तेरा बेड़ा न गीता ने पार करना है, न सुखमनी साहिब ने। रामचरितमानस लिखने वाला सन्त तुलसीदास अन्तिम आयु के तीन वर्ष सख्त बीमार रहा। काफी कष्ट के बाद उसका चोला छूटा। तुलसीदास जी ने रामायण में लिखा है:–

चित्रकूट के घाट पर भई सन्तन की भीर।
तुलसीदास चन्दन घिसे तिलक देत रघुबीर।।

रामायण कहती है कि तुलसीदास जी को रामचन्द्र जी के दर्शन होते थे। यदि ऐसा था तो उनके दुख दूर क्यों नहीं हुए? उन्हें कष्ट क्यों भोगने पड़े? हुजूर दाता दयाल जी ने आज्ञा दी थी, "फकीर, चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना।" मेरी समझ में यह आया है, **"ऐ मानव! तू इस भरोसे मत रहना कि तेरा गुरू बाबा या सावन सिंह या फ़कीर बाबा या कोई और गुरू तुमको सतलोक पहुंचा देगा। तू अपने अमल, अपने कर्म और अपनी नियत को साफ़ रख, ठीक कर और किसी से धोखा फरेब मत कर, वर्ना तुम आवागमन के चक्कर से नहीं निकल सकोगे और न ही कर्म के फल से बच सकोगे।** आप लोग आयें हैं, मैं सोचता हूं कि मैं आपको क्या दूं। मैंने अपने जीवन में जो अनुभव किया और समझा, वह आप लोगों को आपकी भलाई के लिए बता रहा हूं। शत–प्रतिशत तो मैं भी बरी नहीं हूं। यह मन बड़ा चंचल है और बहुत बेईमान भी है। मगर यत्न करता रहता हूं।

सुनो मेरी बिनती गुरू दाता।
तुम तो आए जीव उबारन, दया क्षमा के काजा।
जो नहीं मेरा काम बनाओ, नाम को आवे लाजा।।

काम कब बनेगा? काम तो तभी बनेगा, जब तुम गुरू–आज्ञा में

रहोगे। यदि तुम आज्ञा ही नहीं मानते, तो काम कैसे बनेगा? गुरू की सेवा क्या है?गुरू की आज्ञा मानना और गुरू के वचनों पर अमल करना। गुरू को रूपये तथा कपड़े देना तो सांसारिक व्यवहार है, जो दोगे वही मिलेगा। इससे मैं भी बरी नहीं हूं। मैं अमेरिका गया। जब वहां के लोग मुझे पैसा देते, तो मैं रोता था। क्यों? जिस वस्तु से, जो व्यक्ति घृणा करता है, वह उसके गले का हार बन जाती है। मैं वह आदमी हूं जिसने अपने बाप के घर रोटी नहीं खाई कि बाप रिश्वत खाता था। आज जगह–जगह मंदिर के लिए दौरे पर जाता हूं तो लोगों के घर जाकर रोटी खाता हूं। जिनके घर का मैं टुकड़ा खाता हूं क्या वे रिश्वत से बरी हैं? क्या इन सबकी कमाई नेक है? अमेरिका के लोग गाय का भी मांस खाते हैं उनके घर भी भोजन किया। मेरा अनुभव यह सिद्ध करता है कि जिस वस्तु से कोई जितनी अधिक घृणा करता है, वह उसका शिकार हो जाता है। इसलिए किसी से घृणा मत करो।

मो सम दुष्ट नहीं कोई दूजा, दम्भी मानी गुमानी।
दुखी जानकर चरण लगाओ, प्रेम भक्ति दे दानी।।

जब मैंने अपने बाप के घर का खाना नहीं खाया, तो क्या मैं अभिमानी नहीं था? मेरी वह भक्ति अज्ञान की थी। मैं समझता था कि मैं नेक हूं। मेरा वह धार्मिक जनून का अभिमान था।

दुख क्लेश ने चहुं दिस घेरा, मुझ सा दुखी न कोई।
मुझे तार लो, तब मैं जानूं पतित अधम गति सोई।।

मैं भी पतित था। हुजूर दाता दयाल जी ने मुझे तार दिया। कैसे? उन्होंने मुझे यह समझ और ज्ञान दिया कि यह सारा खेल मन का ही है। अब मुझे विश्वास हो गया कि जब मेरा रूप लोगों के अन्दर प्रकट होकर बड़े बडे काम कर जाता है और मैं वहां नहीं होता, तो यह सब मन का ही खेल है। पहले मेरे अन्दर विचार या रंग–रूप आते थे, मैं उनको सत मानता था, लेकिन अब नहीं मानता। भई! मैं तो ऐसे तरा। अब मैं वही शिक्षा आपको देता हूं। जब यह रहस्य समझ में आ जाता है, तो मनुष्य मन के चक्कर में नहीं फंसता। वह इस चक्कर से निकल जाता है,। यह है ज्ञान की आंख। असली ज्ञान यह है कि न मैं शरीर हूं न मन हूं न प्रकाश हूं और न ही शब्द हूं। मैं इन सबसे जुदा हूं। जब मैं भी इस ज्ञान को भूल जाता हूं तो फंस जाता हूं।

डाक्टर राम जी लाल! तुम आये हो, सेवा करते हो और मंदिर की आर्थिक सहायता भी करते हो, मैं तुम्हे वह बता रहा हूं जो मैंने जीवन में स्वयं अनुभव किया। मैं किताबों में लिखी हुई बातों या दूसरों के उदाहरण नहीं देता। मैं सच कह रहा हूं कि इस समय के गुरूओं ने हमें धोखे में रखा है। जो भी उठता है, वह हम गृहस्थियों को अपने जाल में फंसाने का यत्न करता है। जो कुछ मैंने समझा है यदि वह ठीक है, तो दूसरे सन्त महात्मा, जिन्होंने अपने धन–धान्य और मान–प्रतिष्ठा के लिए, परदा रखा और आप लोगों को सच्चाई नहीं बताई, तो आप लोग तो यही कहोगे कि ऐसे सन्त सतलोक में गये। लेकिन मैं कहूंगा कि यदि कोई नरक है, तो वह उनके लिए है। हुजूर दाता दयाल जी महाराज ने भी किताबों में तो लिख दिया और सैन–बैन में बहुत कुछ कहा, मगर जबानी उन्होंने भी बात को खोला नहीं, जिस प्रकार कि मैंने खोला है। सन्तों के जीवन देखकर तो मैं डर ही गया। इसलिए मैं आपको साफ–साफ बात बता रहा हूं। तुम्हारी इच्छा करे आओ, न करे न आओ, मेरी किताब पढ़ो या न पढ़ो, मंदिर के लिए चार पैसे दो या न दो। मैं इस बात की चिन्ता नहीं करता।

यह मंजिल बहुत ही कठिन है। आप लोगों को क्या करना चाहिए? आप लोगों के लिए वेद मार्ग है। **मानव के विचार में जबरदस्त शक्ति है। इस संसार में रहते हुए, 'शिवसंकल्प' रखो। परिवार का भला चाहो। यह सन्तमत केवल उनके लिए है, जिनको अनुभव हो चुका है कि यहां सुख नहीं है।** गृहस्थियों को चाहिए कि वे नेक बने, अपने विचार शुद्ध रखें, द्वेष और नफरत को छोड़ दें तथा अच्छी सन्तान पैदा करें। यह सब जो मैंने अभी–अभी कहा, आपको नहीं कहा, बल्कि अपने आपको कहा और अब मेरी आत्मा पर कोई बोझ नहीं है। मेरा तो जीवन केवल एक ही विचार से बदल गया। वह विचार था कि मैं किसी के अन्तर में नहीं जाता। इस विचार ने मेरी आंखें खोल दीं। मै तो सबको शुभ भावना देता हूं जो इसको ग्रहण कर लेते हैं उनको लाभ होता है। (Law of Radiation) ला ऑफ रेडियेशन जबरदस्त काम करता है। इसी प्रकार ध्यान में भी बहुत शक्ति है।

पिछली बार जब मैं अमेरिका गया था तो एक अमेरिकन पति–पत्नि मेरे पास आये। वे गरीब थे, मेरा आशिर्वाद प्राप्त करने आये थे। मैंने उन्हें कहा

कि मेरा ध्यान किया करो, तुम्हारी इच्छायें पूरी होती रहेंगी। दूसरी बार जब मै। अमेरिका फिर गया तो वे मेरे पास आये। अब वे बहुत धनी बन चुके थे। क्योंकि मुझे सुनाई कम देता था, इसलिए वह महिला मेरे कानों के डाक्टर को बुला लाई। वह आ कर मेरे कानों की परीक्षा करने लगा। परीक्षा करने के बाद उसने मुझे Hearing Aid सुनने की मशीन खरीदने को कहा। वे पति–पत्नि जा कर मेरे लिए वह मशीन खरीदकर लाये, जिसकी कीमत 645 डालर अर्थात् 6500 रूपये थी। सारा का सारा पैसा उस दम्पति ने ही दिया। मेरे पास तो इतने पैसे थे नहीं, जो मैं देता। इसलिए मैंने उस दम्पति की वह भेंट स्वीकार कर ली। जब मैं देहली वापस आया और सुनने वाली मशीन की कीमत का पता लगवाया, तो उस समय उस मशीन की कीमत केवल 500 रूपये थी। मैंने होशियारपुर में आकर मंदिर में 500 रूपये जमा करवा दिये। अब मेरी आत्मा पर इसका कोई बोझ नहीं है।

अब आप ही सोचो कि वह पति–पत्नि दो साल पहले जब मैं अमेरिका गया था, मेरे से मिलने आये थे तो वह बहुत गरीब थे और अब वह अमीर हो गये थे। उनको अमीर किसने बनाया? उनकी ध्यान शक्ति ने, उनके विश्वास ने। इसलिए ही तो मैं कहता हूं कि जहां भी तुम्हारा विश्वास हो, उसका ध्यान किया करो। ध्यान से तुम्हारी इच्छा–शक्ति बढ़ जायेगी और तुम्हारी मनोकामनाऐं पूरी होती रहेंगी, जो चाहोगे मिल जायेगा। कई आदमी आकर कहते हैं कि बाबा जी! ध्यान नहीं बनता, तो मैं कहता हूं फिर मैं क्या करूं? मैं तो तुम्हारे अन्तर आने से रहा। हजारों लोग मेरा ध्यान करते हैं, उनके काम हो जाते हैं। यदि मैं सच्चाई वर्णन नहीं करता, तो यह जो मैं तुम्हारा टुकड़ा खाता हूं वह मुझे खा जायेगा। मैंने सन्तों के हाल जब देखे, तो कांप उठा कि मेरा अन्त न जाने कैसे होगा! न जाने मैं कैसे मरूंगा?

मेरे पास शुभ भावना है। सच्चे दिल से चाहता हूं कि मालिक तुमको स्वास्थ्य, भोजन, कपड़ा, पैसा और मकान दे साथ ही आपको मन की शान्ति मिले, रब मिले या न मिले। रब तो हर जगह मौजूद है। मेरा केवल भ्रम था, अब वह भ्रम दूर हो गया। अब किसको ढूंढने जाऊँ? तुम लोग आये हो, मैं सच्चे दिल से चाहता हूं कि आप लोगों को सुख मिले।

सबको राधास्वामी

सत्संग परम पुरूष पूर्णधनी मालिके कुल हुजूर मानव दयाल जी महाराज

(24.01.91 हैदराबाद)

ज्ञान दीजे ज्ञान दाता, ज्ञान के भंडार से।
सहज छुटकारा मिले, सबको कठिन संसार से।।
कहने को तो बंध मुक्ति, कल्पना मन की सही।
बिन दया सतगुरू के यह, मिटते नहीं हैं जीते जी।।
नाम का दे आसरा, चरणों में अपने लीजिये।
शब्द की महिमा बताकर, अपना सेवक कीजिये।।
सच्चिदानन्दम् अखंडम्, केवलम् निज रूप हो।
निज दया से जाये, दुखदाई महा भव कूप खो।।
आपका है आसरा, और आपका विश्वास है।
राधास्वामी तारिये, यह भी तुम्हारा दास है।।
सर्ववेदान्त–सिद्धान्त–गोचरं तम् अगोचरम्।
गोविन्दं परमानन्दे सद्गुरूं प्रणतोऽस्म्यहम्।।
महर्षि शिवव्रतलालं, सद्गुरूम् परमेश्वरम्।
वन्दे श्री दाता दयालं, सर्वेशाम् परमं गुरूम्।।
मानवधर्मस्य धातारं, दाता दयालस्य प्रियतमम्।
सन्तधर्मस्य गोप्तारम्, फकीरं वन्दे जगद्गुरूम्।।

राधास्वामी!

मेरी अपनी ही आत्मा के स्वरूप, सद्गुरू प्यारे सत्संगी भाई और बहनों! आज का यह सतसंग यहां की आपकी मानवता–सोसायटी ने हैदराबाद, सिकन्द्राबाद आदि के सत्संगियों के लिए आयोजित किया गया है, यह सन्त–सम्मेलन ही है। पिछले दो दिन हनमकुण्डा में सन्त–सम्मेलन सम्पन्न हुआ और उसी सिलसिले में यह सन्त–सम्मेलन यहा भी आयोजित हुआ है। यहां जो ये नवजवान लड़के बैठे हुए हैं रूप चन्द, भगवान और अशोक, इन लड़कों की बड़ी लगन और उत्साह है,

साहस है जो आपके लिए इतना कष्ट उठाकर सत्संग आयोजित करते हैं। इस संत सम्मेलन में मेरे साथ आचार्य कैप्टन लाल चन्द जी हैं जो राजस्थान के मुख्य आचार्य हैं, आचार्य शब्दानन्द जी हैं, यहां के आचार्य श्याम राव जी हैं और मानवता मंदिर होशियारपुर के वाइस प्रेजीडेंट नारायण दास जी डोगरा, जिन्होंने परम दयाल जी महाराज के साथ रहकर तीस वर्ष से भी अधिक समय तक सेवा की है, यहां उपस्थित हैं। इनके विचार भी आप सुनेंगे।

आज के सत्संग के लिए दाता दयाल जी महाराज का जो शब्द पढ़ा गया है–'ज्ञान दीजे ज्ञान दाता ज्ञान के भंण्डार से' वह ज्ञान क्या है? उसी ज्ञान को देने के लिए परमतत्वाधार, अनामी, दयाल पुरूष युग–युग में निजधाम से नीचे उतर कर शरीर में आता है, ताकि वह उन जीवों को, जो अपने निजस्वरूप को भूलकर अज्ञान में फंस गये हैं, जो अपनी असलियत को ही भूल गये हैं, उनके अन्तर में सच्चा ज्ञान पनपा दे, अन्तर की अमर ज्योति को जगा दे। उसे गुरू और सद्गुरू भी कहते हैं। सद्गुरू का क्या महत्व है? सद्गुरू है तो परमतत्वाधार, उसने ऊपर निजधाम में बैठे हुए देखा कि उसके जो अंश जीवरूप में नीचे आये हुए हैं, वे अपने आपको भूल गये हैं। इसलिए वह परम तत्वाधार हर युग में मनुष्य के चोले में आया और आता रहेगा।

मैंने इस सम्मेलन के आरम्भ में जो मंगलाचरण कहा है वह दाता दयाल जी के प्रति कहा है। दाता दयाल जी का नाम महर्षि शिवब्रतलाल बर्मन था, उन्होंने अपने जीवन काल में सारे भारत को ही नहीं, बल्कि सारे विश्व को जगाया और चिताया। वे कहते थेः–

सुनते नहीं हैं दुनिया के गाफिल मेरा कलाम,
बेदार होके कहता हूं ताबीर ख्वाब की।

दाता दयाल जी महाराज उच्च कोटि के अवतार थे। उनका कलाम है कि जो लोग अपने आपको जागता हुआ समझ रहे हैं, वास्तव में वे सो रहे हैं और जिस संत सतगुरू को लोग समझ रहे हैं कि वह नशे में है, वही वास्तव में जागा हुआ है। वह मालिक के नशे में रहता है। उसको दुनिया की होश नहीं है, लेकिन वह उस बेहोशी में है कि जिसमें असली होश रहता है।

दाता दयाल जी महाराज ने आयु पर्यन्त दुनिया वालों को चिताया। आपके आन्ध्र प्रदेश में भी दाता दयाल काफी समय यहां रहकर चिताने का काम करते रहे। उनका कलाम, उनका शब्द वह धारा है जो ऊपर से बह रही है, जिसकी धारा से यह सारा जगत् निर्मित हुआ है। उसी धारा में बहते–बहते, गोते खाते, दयाल के अंश जब अपने अन्दर कोई कमी महसूस करते हैं और सोचते हैं कि हम कहां से आये, जब उनके अन्दर तड़फ उठती है, तब वह धारा से राधा बनकर स्वामी की तरफ उन्मुख होते हैं। ऐसे जीवों को सच्चा जीवन देने के लिए, सच्चा ज्ञान देने के लिए दाता दयाल जगत् में आए। पहिले भी वे आये थे, पहिले वे गौतम बुद्ध के रूप में आये थे। इसलिये मुझे कहना पड़ा–

महर्षि शिवव्रतलालं, सद्गुरूम् परमेश्वरम्।

वे जीवों का असत् से उबारने वाले, सत् ज्ञान देने वाले सद्गुरू थे। वे ईश्वर नहीं, परमेश्वर थे। भगवान कृष्ण को और अवतारों की अपेक्षा परम अवतार मानते हैं और वही जब दाता दयाल के चोले में आये तो परमेश्वर हुए या नहीं!

दाता दयाल जी महाराज ने अपनी एक पुस्तक में बताया है (शायद "अद्भुत उपासना योग") कि जब ब्रह्मा जी की जिज्ञासा हुई तत्वज्ञान के जानने की तो वे विष्णु के पास गये। विष्णु को स्वयं यह जिज्ञासा थी, अतः दोनों भगवान शंकर के पास गये और शंकर जी ने उन्हें समझाया। यद्यपि यह प्रतीकात्मक है पर है सत्य और सारगर्भित। शंकर भगवान ने उनको कहा, "भाई यदि तत्वज्ञान प्राप्त करना है तो मेरी बात मानो और चलो मेरे साथ जहां मैं चलता हूं। प्रयागराज और काशी जी के मध्य एक सुन्दर स्थान है, वहां सद्गुरू रूप में मनुष्य चोले में मेरा ही स्वरूप है, वहां गये बिना तत्वज्ञान हासिल नहीं होगा। इसलिए वहां चलकर तत्वज्ञान सीखना चाहिए।" भगवान विष्णु तो विष्णुदत्त नाम धारी बन गये और शंकर नन्दू भाई बन गये और ब्रह्मा जी ब्रह्मदत्त बन गये। तीनों दाता दयाल जी के आश्रम में पहुंच गये और उनसे तत्वज्ञान की शिक्षा प्राप्त की।

सारतत्व का ज्ञान देने के लिए परमगुरूतत्व को मनुष्य के रूप में अवतरित होकर उपदेश करना पड़ता है। इसलिए मैंने कहा–

महर्षि शिवव्रतलालं, सद्गुरूम् परमेश्वरम्।
वन्दे श्री दाता दयालं, सर्वेषाम् परमं गुरूम्।।

जिनको दुनिया ईश्वर मानती है उन्हें भी मनुष्य रूप में सद्गुरू के पास आना पड़ता है। इसलिए मैंने उन्हें परमेश्वर कहा है। दाता तो बहुत हैं–कोई अन्नदाता है, कोई धनदाता है। बिरला जी ने बहुत दान दिया लेकिन अपना नाम कमाने के लिए। लेकिन दाता दयाल जी महाराज ने अपना नाम कमाने के लिए या अपने स्वार्थ के लिए दान नहीं दिया। उन्हें कोई कमी नहीं थी, वे उत्कृष्ट कोटि के लेखक थे। लेकिन कलम की कमाई सब बांट दी और हाथ में रोटी लेकर दाल से खा लेते थे। उन्होंने दूसरों की भलाई के लिए अपना सर्वस्य त्याग कर दिया। दयाल तो वास्तव में वह है जिसके हृदय में सबके लिए दया और सहानुभूति उमडती हो। आज जो शब्द पढ़ा गया, उसके हरेक शब्द के अन्दर सारे धर्मों का निचोड़ है। उनके किसी भी शब्द को पढ़ें उनमें आपको उनकी दयालुता का पता चल जाता है।

चाहे आप किसी भी धर्म या मत के मानने वाल क्यों न हों, दाता दयाल जी महाराज ने हर धर्म और मत पर प्रकाश डालते हुए उत्तम कोटि की पुस्तकें लिखी। इसलिए वे सर्वेषाम्–सभी के परम गुरू थे। जैन धर्म पर लिखा तो जैनियों को दर्शा दिया कि जैन मत वास्तव में है क्या। हिन्दू या सनातन धर्म तो उन्होंने कमाल की पुस्तकें लिखीं। उपनिषदों पर लिखा, गीता पर लिखा, रामायण पर लिखा और संतमत के तो वे व्यास ही हुए। कबीर पन्थ, नानक पन्थ पर लिखा, ईसाई धर्म पर लिखा, इस्लाम धर्म पर लिखा। उन्होंने दुनिया को बता दिया कि मानव धर्म ही सभी धर्मों का आधार है।

दाता दयाल जी के परमशिष्य परमसंत अवतार परम दयाल जी महाराज, जिनको उन्होंने खुद कहाः–

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेषा।
दुखी जीव को अंग लगाकर, ले जा गुरू के देशा।।
तीन ताप से जीव दुखी है, निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी।।

दाता दयाल जी ने यह भी पहिचान लिया था कि जो फकीर

का चोला धारण करके अवतरित हुआ है, उनका पूर्वजन्मों का साथी है। दाता दयाल जी ने एक बार कहा था कि वे गौतम बुद्ध के अवतार थे और परमदयाल जी उस समय उनके शिष्य आनन्द थे। मैं आपको प्रसंगवश बता रहा हूं। मैंने इसकी व्याख्या स्वयं परम दयाल जी को सुनाई थी। दाता दयाल जी ने खुद उनको कह दिया कि फकीर तू सद्गुरू वक्त है। इसलिए मैंने दूसरा नमस्कार परम दयाल जी महाराज को किया। उनका दुनियावी नाम पं0 फकीर चन्द था लेकिन दाता दयाल जी ने उनको 'परम दयाल' नाम दिया।

इस शब्द में 'गुरू के देश' से मतलब है परमधाम, मालिक का निज धाम, और तीन ताप से तात्पर्य है–1. शरीर का रोग, 2. मन का शोक और 3. आत्मा का अज्ञान। शरीर के रोग को तो आप सब जानते हैं, मन के रोग से मतलब है कि जब किसी के मन पर कोई आघात पहुंचता है और मन उदास हो जाता है तो वह दुखी होता है। कई लोगों की तो बुद्धि विकृत हो जाती है। ये सब मन के रोग हैं। अब रही आत्मा के अज्ञान की बात –जीव अपने सच्चे रूप का ज्ञान न होने के कारण अपने आपको नाशवान समझने लगता है, अपने आपको शरीर समझने लगता है, अपने आपको मन समझने लगता है जबकि वह यह सब नहीं है, अरे! वह तो आत्मा भी नहीं है। वह तो ऐसी चीज है जो अजर, अमर, अविनाशी है। इन तीनों तापों को दूर करने के लिए दाता दयाल जी ने परम दयाल जी को कहाः

तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी।

दयाल जीवों को इन तीनों तापों से बचाता है। कैसे? नामदान देकर। नाम चौथा पद है। यह ऐसा तरीका है, जिससे कि शरीर, मन और आत्मा के स्तरों पर रहते हुए भी मनुष्य का संबंध ऊपर से हो जाता है, ताकि न तो शरीर बिगड़े, न मन की चंचलता के कारण उसे शोक हो और न अज्ञानवश वह मौत के भय से दुखी हो। इस भवसागर में रहते हुए भी वह उसमें डूबे नहीं बल्कि तैरता रहे। ऐसी अवस्था हो जाये कि दुनिया का काम भी चले, पारिवारिक जिम्मेदारियां भी पूरी हों और यह सब होते हुए भी मालिक से तार न टूटे। उससे संबंध जुड़ा रहे, यह नाम की विशेषता है। पंजाब में कहावत है–

हत्थ कार वल, ते दिल यार वल।

शरीर से संसार के काम होत रहें, पर मन की तार मालिक से जुड़ी रहे। ऐसी प्रेम की तार बंध जाये। वह अवस्था है नामदान। इसी सिलसिले में आगे दाता दयाल जी महाराज परम दयाल जी को कहते हैं–

तेरा रूप है अद्‌भुत अचरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत् में आया, परम दयाल सनेही।।

फकीर! तू इस जगत में अपने लिए नहीं, बल्कि जग–कल्याण के लिए आया है। हांलांकि इस जगत में जो कोई भी आता है वह नाम और रूप धारण करके आता है और अपने साथ कर्म लेकर आता है। यहां कोई किसी का बेटा है, किसी का पति है, किसी का बाप है, किसी का भाई है, किसी का दोस्त है तो किसी का दुश्मन है, किसी का पड़ोसी है तो किसी देश का नागरिक है। सद्‌गुरू भी नर–शरीर धारण करके आता है, लेकिन उसका शरीर आम आदमियों जैसा नहीं होता, यह समझने की बात है। आम लोगों की तरह उसकी शरीर के साथ आसक्ति नहीं होती, उसके शरीर में एक विशेष धार होती है, एक विशेष किरण होती है। इस शरीर से काम लेता हुआ भी उसका शरीर दूषित नहीं होता। उसका शरीर भी आश्चर्यजनक होता है।

परम दयाल जी कहा करते थे, "लोग कहते हैं, मेरा रूप प्रकट होता है और मैं सुनकर हैरान होता हूं। मुझे पता नहीं होता, क्योंकि मै तो वहां उपस्थित नहीं होता।" क्योंकि वह शरीर भी अपना नहीं और मन भी अपना नहीं होता मगर रूप प्रकट जरूर होता है। वह सत्संगी के प्रेम और श्रद्धा से प्रकट होता है। लेकिन सत्गुरू क्यों कहता है कि मैं नहीं होता? क्योंकि उसका अपना रूप तो शरीर, मन और आत्मा से भी ऊपर है। वह अविनाशी है। इसलिए जो लोग गुरू को मनुष्य मानकर गुरू की पूजा करते हैं, भले ही उनकी इच्छाऐं पूरी हो जांय, लेकिन वह आवागमन से मुक्त होकर सतलोक नहीं जा सकते। जो सच्चा ज्ञान गुरू देना चाहता है, उसे नहीं मिल सकता जो रूप रंग में फंसा है।

गुरूपूर्णिमा के सत्संग के बाद मैं महारज जी वाले कमरे में बैठा था तो कुछ स्त्री–पुरूष आकर मुझसे मिलने के लिए बैठ गये। उनमें से एक चालिस–पैंतालीस साल की स्त्री जो हरियाणा से आई थी बोली,

"महाराज जी, मैं एक बात कहना चाहती हूं।" मैंने पूछा, "क्या बात है?" वह बोली, "पन्द्रह दिन हुए मैं अपने गांव गई थी। महेन्द्रगढ़ मेरे गांव का रेलवे स्टेशन है। ट्रेन रात के दो बजे वहां पहुंची। मैं उतरी, मेरे पास सात अदद सामान के थे। मैंने कुली तलाश किया पर कोई कुली नहीं मिला। महाराज जी, मैंने तो आपका ध्यान किया और आप आ गये। आपने मेरा सूटकेस, बिस्तर बंद आदि छः अदद सामान उठा लिया और एक सामान मैंने उठाया और तीन लाइनें पार करा कर आपने मुझे तांगे में बिठा दिया। महाराज जी आपने मुझ गरीबनी पर बड़ी दया की।"

अब आप सोचो, क्या मैं छः अदद सामान उठा सकता हूं? मैं अपने सामान के लिए कुली करता हूं और मैं तो उस औरत को जानता तक नहीं। लेकिन धन्य है वह और उसका प्रेम और विश्वास जिसने मुझको प्रकट कर लिया और मुझसे कुलीगिरी कराई। मैं कहता हूं कि मेरे स्थूल शरीर और मन से प्रेम करके तुम ऐसा चमत्कार कर सकते हो तो यदि मेरे पूर्ण रूप से प्रेम करोगे तो ये चमत्कार तो होते रहेंगे मगर तुम इससे भी ऊपर उठ जाओगे। इसलिए मैं सच्ची बात कह देता हूं। मेरे सच कह देने से सत्संगी का विश्वास टूटता नही है, बल्कि और दृढ़ हो जाता है। अगर सच न कहा जाय और परदा रख कर सत्संगियों को धोखे में रखा जाय तो इससे डेरे–धाम तो बन सकते हैं, लेकिन जगत् कल्याण नहीं हो सकता।

'परम दयाल सनेही' से मतलब है कि जो परम दयाल है, सच्चा स्नेही है, प्रेम में सना हुआ है, प्रेम में ओत–प्रोत है। यह है सच्ची मानवता। सनातन धर्म और संतमत भी यही कहता है कि मानव पूर्ण है। 'मानवधर्मस्य धातारम्' अर्थात् मानवधर्म के आधार। दातादयाल जी ने भी यही कहा कि 'मनुष्य बनो' और आगे का काम दे दिया परम दयाल जी महाराज को। उन्होंने मानवधर्म की आधार शिला रख दी। है तो मानवधर्म भी राधास्वामी ही लेकिन हम उसे राधास्वामी इसलिए नहीं कहते क्योंकि लोग समझते हैं कि राधास्वामी कोई अलग फिरका है। **कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक मनुष्य अपने आपको नहीं पहचानता, तब तक उसे मालिक की पहचान नहीं हो सकती, जो उसका निज स्वरूप है**। सब धर्म यही कहते हैं कि

मनुष्य ईश्वर का स्वरूप है। ईसाई और यहूदी भी कहते हैं कि जब खुदा ने मनुष्य को बनाया तो उसे अपने ही रूप में ही बनाया। लेकिन वेद कहते हैं–'अमृतस्य पुत्रः'– तू अमृत का पुत्र है।

दाता दयाल जी और परम दयाल जी ने भी यही कहा–'मनुष्य बनो' अर्थात् हमारा जो असली रूप है मनुष्य का वह स्वरूप ही हमारा होना चाहिए और वह तब होगा जब तुम दुनियावी दृष्टि से मानव बनोगे। **हम दयाल–दयाल कहते हैं और दयाल को मिलना चाहते हैं परन्तु क्या हमारे मन में दया है? तुम जिससे मिलना चाहते हो पहिले वैसा खुद बनो। 'देवो भूत्वा देवंभजेत्'। मंदिर में देवता के पास जाने से पहले स्नान आदि करते हैं, रेशमी वस्त्र पहनते हैं, चन्दन लगाते हैं ताकि हर प्रकार से हम पवित्र हो जांय। स्वयं देवता बनकर देवता की पूजा हो सकती है।** आगे चलकर केवल रस्म रिवाज रह गया और हम असलियत को भूल गये। मनुष्य वह है जिसके मन में दया है और जिसने अपने जीवन में दया को उतारा हुआ है। जिसमें दया है, उसमें प्रेम होगा। झूठ–मूठ 'मानवता धर्म–मानवता धर्म' की रट लगाने से कोई फायदा नहीं है।

परम दयाल जी महाराज बार–बार कहते थे कि सबसे मुख्य बात यह है कि **तुम अगर सच्चे सत्संगी बनना चाहते हो तो पहिले मनुष्य बनो और अपने घरों के अन्दर प्रेम का व्यवहार करो और ईर्षा, द्वेष को छोड़ो।** जब तक दिलों में ईर्ष्या और द्वेष रहेंगे तो घरों में अशान्ति रहेगी और यह अशान्ति ही दुखों का कारण बनेगी। बड़ी वैज्ञानिक बात परमदयाल जी ने कही लेकिन किसी ने उसे समझा नहीं। कहने को तो 'शिवसंकल्पमस्तु' बड़ी साधारण सी बात लगती है, लेकिन यह बड़ी सूक्ष्म और ऊँची बात कही है परम दयाल जी महाराज ने। तुम जो भी काम करो शुद्ध भावना से करो। घर के अन्दर प्रेम–भाव होना जरूरी है। माता–पिता को चाहिए कि बच्चों से प्रेम करें और बच्चों को चाहिए कि माता–पिता का आदर करें। बच्चों को बताना चाहिए कि बड़ों के पैर छूने से मन में पवित्रता के भाव आते हैं। जब तक घर में शान्ति नहीं होगी, तब तक दिलों में शान्ति नहीं होगी, फिर तुम साधन समाधि भी नहीं कर सकते। जहां प्रेम नहीं है,

कलह और द्वेष है, वहां मुसीबतें आती हैं। उनसे बचने के लिए पहिले व्यावहारिक रूप से मानवता पर चलोगे तब तुम मानवता का सच्चा आध्यात्मिक रूप अपने आप समझ में आ जावेगा और तब तुम उस पर पहुंच जाओगे। दोनों रूप आवश्यक हैं।

इस मानव धर्म की आधारशिला परमदयाल जी महाराज ने रखी और कहा कि घरों में शान्ति रखो, प्रेम करो, नफरत मत करो। अगर दयाल पुरूष को मिलना चाहते हो तो पहिले खुद दयाल बनो। दाता दयाल जी महाराज जो विष्णु के अवतार थे, उनका मन विष्णु था, उनकी आत्मा शिव थी और उनकी सुरत परमतत्व की थी। वे पूर्ण मानव के रूप में आये और उन्होंने परमदयाल जी महाराज को नियुक्त किया और कहा, 'तू तो आया नर देही में धर फकीर का भेषा।' और आगे कहा–

तू फकीर है मेरे प्यारे, सुन फकीर की बानी।
साधु कहें फकीर को भाई, साधु जग सुखदानी।।
सुन ले कथा सुनाऊँ तुझको, प्रगटे विमल विवेका।
जीव अनेक रहें जग माहीं, पर फकीर कोई एका।।

दाता दयाल जी ने उन्हें एक अवतार ही माना, इसलिए मैंने उन्हें कहा 'दाता दयालस्य प्रियतमम्, संतधर्मस्य गोप्तारम्'। अर्थात् संतमत के रक्षक। किस प्रकार से?उन्होंने बता दिया कि संतमत और सनातन धर्म एक है। अगर इस सत्य को संतमत वाले नहीं मानते, तो संतमत और राधास्वामी मत नहीं रहेगा। इसलिए उन्होंने इस मत का नाम 'मानवता धर्म' रखा। सनातन धर्म ही मानवताधर्म है जो सदा रहने वाला है। पहले भी था, आज भी है और कल भी रहेगा। परम दयाल जी महाराज ने आपको सहज रूप में बतला दिया कि मानवताधर्म किस प्रकार आपको ऊँची से ऊँची अवस्था तक पहुंचा सकता है। लोग कहते हैं कि परम दयाल जी कहते थे कि 'गुरू प्रकट नहीं होता' और दूसरे गुरू कहते हैं कि वे जाते हैं और इसी भुलावे में आकर लोग दूसरे गुरूओं को करोड़ों रूपया भेंट देते हैं, तो इस प्रकार महाराज जी आप तो संतमत को नुकसान पंहुचा रहे हैं।

एक बड़े संत राधास्वामी मत के परम दयाल जी के पास बैठे हुए थे तो महाराज जी ने कहा कि भाई मैं तो कहीं प्रकट नहीं होता।

मालिक तो सर्वव्यापक है, उसे जो चाहे प्रेम से प्रकट कर सकता है। फिर उन्होंने उन संत से पूछा, भाई आप बताओ, क्या आप प्रकट होते हो? उन्होंने कहा–मै। भी प्रकट नहीं होता। महाराज जी ने कहा फिर तुम यह बात अपने शिष्यों को क्यों नहीं बताते। उन संत जी ने कहा कि महाराज, आप तो संतमत को तोड़ रहे हैं और हम उन्हें जोड़ रहे हैं। हम तो संतमत के रक्षक हैं और आप उसे बिगाड़ रहे हैं। परम दयाल जी ने उन्हें समझाया कि अगर एक सत्संगी भी सार तत्व को समझकर सच्चाई के रास्ते पर लग गया तो संतमत का उद्देश्य पूरा हो गया।

वास्तविक बात यह है कि जब तक मानवता को दानवता के रास्ते से बचा कर उसे सच्ची मानवता के रास्ते पर नहीं लाया जाता, तब तक दुनिया के अन्दर स्थाई शान्ति नहीं हो सकती। और यही कारण है कि आज विश्व के हर कोने से मानवता की मांग हो रही है। सभी धर्म मनुष्य के कल्याण के लिए बने हैं। जो भी अवतार आये, सब मनुष्य के रूप में आये। ऐसा कोई अवतार नहीं है जो दानव या राक्षस बन कर आया हो। सारे धर्म वास्तव में मानव धर्म ही हैं। इसमें कोई संदेह की बात नहीं है।

मैं आपको बताना चाहता हूं कि मानवता क्या है? सभी सनातन धर्म के पण्डित मानते हैं कि बुद्ध भगवान विष्णु के अवतार थे। संस्कार के समय वे उच्चारण करते हैं–'हरिःओम् तत्सत् ब्रह्मकृश्री विष्णु बौद्धावतारे।' इस प्रकार सभी सनातनी दाता दयाल जी को मान रहे हैं किन्तु समझते नहीं। हुजूर राय साहिब साालिग्राम जी ने दाता दयाल जी को संतमत का व्यास कहकर घोषित किया था और दाता दयाल जी ने उनकी उद्घोषणा को अक्षरशः सत्य सिद्ध कर दिखाया। व्यास ऋषि ने क्या किया? उन्होंने वेद, पुराण, उपनिषद आदि सारे धर्मग्रन्थों को फिर से एक तरतीब दी। श्रीमद्भागवत जो सबसे उत्तम धर्मग्रन्थ है, जिसमें सारा महाभारत, गीता आदि आ जाते हैं, लोग इसका पाठ तो करते हैं लेकिन उसको समझते नहीं कि आखिर महर्षि वेदव्यास जी ने धर्म के बारे में क्या कहा या क्या लिखा? उसका निष्कर्ष एक ही मन्त्र में है–

आत्मनः प्रतिकूलानि मा परेषां समाचरेत।

अर्थात् जो व्यवहार आपके लिये दुखदाई है, वह दूसरों के साथ भी मत करो। इस एक वाक्य में मानवता धर्म को परिभाषित कर दिया है। अगर इसको भी नहीं मानते तो मैं आपको और प्रमाण देकर समझाता हूं। एक बार नैमिषारण्य क्षेत्र में अठासी हजार ऋषि–मुनि एकत्रित हुए और गृहस्थियों के लिये उन्होने अपना अनुभव बताया। उस सम्मेलन की अध्यक्षता वेदव्यास जी कर रहे थे। वहां एक प्रश्न उठाया गया कि इस जगत् में सबसे श्रेष्ठ वस्तु क्या है? अब इस जगत् में तो मनुष्य, राक्षस, दानव, देवी–देवता, ब्रह्मा, विष्णु, और शिव भी हैं। पर जगत् के बाहर की बात नहीं पूछी गई थी। एक ऋषि ने उठकर कहा कि परमतत्व सर्वाधार सबसे श्रेष्ठ है। लेकिन यह उत्तर सर्वमान्य नहीं हुआ। जब किसी ने सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया तो वेदव्यास जी ने स्वयं उत्तर दिया और कहा–**'गुह्यतरम् इदम् ब्रुमि, नहिं मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित।' अर्थात मैं तुम्हें सबसे गुप्त रहस्य बता रहा हूं कि इस जगत् के अन्दर मनुष्य से श्रेष्ठ कोई अन्य नहीं है।** इसलिये मैंने कहा–

मानवधर्मस्य धातारं, दाता दयालस्य प्रियतमम्।
सन्तधर्मस्य गोप्तारम्, फकीरं वन्दे जगद्गुरूम्।।

इस सच्ची बात को कहते हुए संत धर्म की रक्षा हो रही है, नही तो संत धर्म लुप्त हो जायेगा। अब बात तो सच्ची यह है कि मनुष्य अपने आप में पूर्ण है। सब अपने को अपने को अपूर्ण समझ रहे हैं क्योंकि उनकी पूर्णता का ज्ञान पर्दों में छिपा हुआ है। **परमतत्व अवतार भी तो हमारी तभी मदद करता है जब वह मनुष्य चोले में आता है। ऊपर बैठा हुआ परमतत्वाधार तो हमारे काम नहीं आयेगा, उल्टे उसने तो हमें इस भव सागर में दुख–सुख सहने के लिए नीचे ढ़केल दिया है।** और आम आदमी तो अपने अज्ञान के कारण अंधकार में भटक रहा है। आम आदमी तो क्या गुरू लोग भी भटक रहे हैं। इसलिए कबीर साहिब ने कहा है–

उतते कोई न आइया, जासे पूछूं जाय।
इतते सब ही जात हैं, भार लदाय लदाय।।

भार का मतलब है कि जो मनुष्य किसी प्रकार की आसक्ति में

या किसी वस्तु के आकर्षण में फंसा हुआ है, वह उसके कारण ऊपर नहीं जा सकता। अब आप कहोगे कि गुरू लोग भी चेले बनाने या डेरों के मोह में फंसे हुए है। यद्यपि इतना तो है कि वे गुरू आम लोगों को इस रास्ते पर तो ला रहे हैं, लेकिन अगर वो ऐसा इसलिए कर रहे हैं कि कि उनका नाम हो जाये या उनका धाम बन जाये तो वे भी भार लदा कर जा रहे हैं। इसलिए कबीर साहिब ने ठीक कहा है। भार इसलिए लदा रहे हैं क्योंकि वे अज्ञान में भटक रहे हैं, उनकी विवेक–बुद्धि नहीं है। इसलिए कबीर साहिब ने फिर कहा–

उतते सतगुरू आइया, जाकी बुद्धि मति धीर।
भव सागर के जीव को, खेय लगावें तीर।।

सतगुरू की क्या पहिचान है? सतगुरू की बुद्धि टिकी हुई होती है, वह दुख–सुख, हानि–लाभ, जय–पराजय किसी भी द्वंद्व की हालत में अपनी समता को नहीं खोता, अपने आप में टिका रहता है। अपनी मिसाल कायम करके सतगुरू जीवों को भवसागर से पार ले जाता है। यह है गुरूज्ञान। **एक गुरू का रूप तो परमतत्व है, दूसरे में वह सबके घट में विराजमान रहता है, तीसरे रूप में वह गुरू ज्ञान दाता है, अज्ञान के अंधेरे को दूर करने वाला है।** यह शब्द दाता दयाल जी का जो शब्दानन्द जी ने पढ़ा है, इसमें जो परमतत्वाधार मनुष्य के रूप में अवतार लेकर आया हुआ है, अज्ञानी जीवों को सच्चा ज्ञान देकर चिताने के लिए, उस गुरू के प्रति कहा गया है।

ज्ञान दीजे ज्ञान दाता, ज्ञान के भण्डार से।
सहज छुटकारा मिले, सबको कठिन संसार से।।

ज्ञानदाता गुरू को मैं प्रेमदाता भी कहता हूं। कौन सा ज्ञान? यह ज्ञान कि मनुष्य को मनुष्य क्यों कहा जाता है?

आहार निद्रा भय मैथुनं च, समानमेतम् पशुभिर्नराणाम्।
ज्ञानोहितेशामधिको विशेषः ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समानाः।।

अर्थात् खाना–पीना, निद्रा करना, बच्चे पैदा करना, यह सब तो मनुष्य और पशु में समान है। अगर कोई समझे कि अधिक खाने से श्रेष्ठ होता है तो हाथी से ज्यादा तो कोई नहीं खा सकता तो क्या हाथी श्रेष्ठ हो सकता है। अगर कोई सोचे की अधिक सोने से ही श्रेष्ठता आती

है तो ऐसा नहीं है क्योंकि अधिक सोने से तो आलस्य होता है। इस दृष्टि से घोड़ा श्रेष्ठ है जो सोता ही नहीं। भय से पशु भी डरता है और आप भी डरते हो। यह भय भी मनुष्यता का लक्षण नहीं है और बच्चे पैदा करने से यदि कोई श्रेष्ठ बनता तो सबसे अधिक बच्चे तो सुअर पैदा करता है, तो आप श्रेष्ठ हुये या सुअर?

'ज्ञानोहितेषामधिको विशेषः ज्ञानेन हीनाः पशुभीः समाना।' अर्थात् यदि मनुष्य पशु से श्रेष्ठ है तो अपने ज्ञान के कारण। इसलिए परमदयाल जी महाराज कहते थे कि गुरू ज्ञान का रूप है, ज्ञान ही गुरू का रूप है और **ज्ञान–विवेक मनुष्य में ही होता है, पशु में नहीं। जो मनुष्य ज्ञान का इस्तेमाल नहीं करता वह पशु समान है। विवेक और ज्ञान कहता है कि आप घर के अन्दर प्रेम का व्यवहार करो। इसलिए प्रेम और ज्ञान एक ही चीज है।**

गुरू ज्ञान लेकर आता है तुम्हें समझाने के लिए। गुरू ज्ञान का भण्डार होता है। अगर गुरू आपके प्रश्नों का सन्तोषजनक जबाब नहीं देता तो वह ज्ञान का भण्डार नहीं है। असली ज्ञान दाता वह है जो हमारे मन और परमतत्व के बीच जो पर्दे पड़े हुए हैं, उन्हें हटा दे। **आंखों से देखना, कानों से सुनना, जुबान से चखना भी ज्ञान है, परन्तु यह इन्द्रिय ज्ञान है। इसको असली ज्ञान नहीं कहते। बुद्धि के द्वारा विचार करना, नये–नये अविष्कार करना भी ज्ञान है, लेकिन हम इसे भी ज्ञान नहीं कहते। जो ज्ञान हमें ज्ञानदाता से लेना है, जो सबसे ऊँचा ज्ञान है, वह है अपने आपे का ज्ञान।**

वैज्ञानिक बड़े–बड़े अविष्कार करते हैं, लेकिन जहां तक आत्मा के ज्ञान का सम्बन्ध है, ये महान वैज्ञानिक महज तिफ्ल–ए–मकतक है। अगर इन वैज्ञानिकों को आत्म–ज्ञान होता तो ये एटम बम नहीं बनाते। यह कसूर विज्ञान का नहीं है, बल्कि मानव के अज्ञान का है जो विज्ञान को गलत इस्तेमाल करता है। पहिले इन्सान बनो। जब तक मनुष्य को आत्मज्ञान नहीं होता, तब तक मनुष्य मनुष्य नहीं बनता, तब तक दुनिया में शान्ति नहीं हो सकती।

ज्ञान दीजे ज्ञान दाता ज्ञान के भण्डार से।

कौन सा ज्ञान? जिस ज्ञान के होने के बाद किसी और ज्ञान की जरूरत नहीं रहती, वह ज्ञान। किसका ज्ञान? ज्ञाता का ज्ञान। जानने वाले का अपना ज्ञान। यह बहुत ऊँची और झीनी बात है। मैं आपको बता रहा हूं कि वह निज–ज्ञान जब हो जाता है, तब यह समझ में आ जाता है कि न मैं शरीर हूं, न मन हूं और न आत्मा हूं। मैं तो अविनाशी हूं और वह अविनाशी तो सबके अन्दर मौजूद है।

संसार में जितने भी ज्ञान हैं, उनमें से सबसे श्रेष्ठ ज्ञान मांगा गया है। यह संसार तो महाकठिन है। किसी को कोई दुख है, किसी को कोई तकलीफ है। लोग एक दूसरे की टांगे खींचते रहते हैं, निन्दा करते रहते हैं। इसलिए ऐसा ज्ञान दीजिए कि आसानी से इस संसार से छुटकारा मिल जाये। कर्मकाण्ड और यज्ञादि के लिए इस युग में किसी के पास समय नहीं है। इसलिये सहज से सहज विधि का ज्ञान दीजिये जिससे इस कठिन संसार से हमें जल्द छुटकारा मिल जाये।

कहने को तो बंध मुक्ति, कल्पना मन की सही।
बिन दया सतगुरू के वह, मिटते नहीं है जीते जी।।

यह ठीक है कि बंधन–मुक्ति मन की कल्पनाएं हैं, लोग कल्पनाओं में उलझे हुए हैं। स्वर्ग–नरक भी मन की कल्पना ही है। ऐसे ही मनोमय कोष के अन्दर गोलोक, शिवलोक आदि भी है, ये सब केवल कल्पनाऐं हैं। हमने खुद इनको पैदा किया है अपने मन से। अगर इस बात का ज्ञान हमें गुरू से मिल जाए तो इन सबसे सहज छुटकारा मिल जाए। लोग मरने से डरते हैं, लेकिन मृत्यु बुरी चीज नहीं है। मृत्यु तो बंधनों से छुटकारा पाना है। **लेकिन यदि उस समय तुमको गुरू से मिला हुआ यह ज्ञान याद रहे कि संसार की कोई भी वस्तु है पूर्णरूप से सत्य नहीं है, केवल मन की कल्पनाऐं हैं, तो तुम सीधे ऊपर के लोक में चले जाओगे।**

नाम का दे आसरा, चरणों में अपने लीजिए।
शब्द की महिमा बताकर, अपना सेवक कीजिये।।

'चरणों में अपने लीजिए'–यह है भक्ति और प्रेम की विनम्रता। गुरू के दरबार में आकर अपना अहंकार त्याग देना चाहिए। तब गुरू आपको जो नाम तत्व प्रदान करेगा, वास्तव में वह सहारा है, डोरी है

जिसे पकड़कर आप ऊपर पहुंच जाते हैं। **शब्दयोग को सहजयोग भी कहते हैं। शब्द मालिक का पहला प्रकटरूप है और वही गुरू है। सुरत उसका दूसरा रूप है जिसे शिष्य कहते हैं। शब्द ही आकाश तत्व है जो सबको मिलाकर एक करने वाला है। शब्द की महिमा समझनी हो तो गुरू से समझो जो शब्द में रहता है और किसी से द्वेष भाव नहीं रखता।**

गुरू वही जो शब्द सनेही, बिना शब्द दूसर नहिं सेई।

जो शब्द का अनुभव करके खुद शब्द बन गया है, उसे अभ्यास करने की जरूरत नहीं रहती। शब्द में रहने वाला किसी से भेद–भाव नहीं करता, नफरत का तो सवाल ही पैदा नहीं होता। ऐसे गुरू के मुख से निकला हुआ शब्द ही आपको ऊपर ले जाएगा। उसकी वाणी से अगर आपको तृप्ति या शान्ति नहीं मिलती, अगर आपको झटका नहीं लगता, अगर आपकी थोड़ी देर के लिए अविनाशी रूप का बोध नहीं होता तो समझिये कि वह अभ्यासी नहीं है, वह सतगुरू नहीं है। मैं इतना जो बोल रहा हूं यदि इससे आपको आनन्द और मस्ती नहीं आती तो मैं शब्दाभ्यासी नहीं हूं। वह जादू ही क्या जो सिर पर चढ़ कर न बोले! यह मस्ती, यह आनन्द, यह शान्ति शब्द का जादू है, शब्द का रंग है, उसके प्रेम का प्रभाव है जो हर एक श्रोता पर असर करता है और हरएक आदमी मस्ती में झूमने लगता है। इस शब्द की महिमा बताकर ऊपर ले जाने के लिए गुरू से बिनती की गई है।

सच्चिदानन्दम् अखंडम् केवलम् निजरूप हो।
निज दया से जाय दुखदाई महा भव कूप खो।।

आपका शरीर भी है, मन भी है और आत्मा भी है। लेकिन इनके पीछे आपका जो अविनासी तत्व है, वह है गुरू।

गुरू को मानुष जानते, ते नर कहिये अन्ध।
दुखी होयं संसार में, आगे यम का फन्द।।
गुरू किया है देह को, सतगुरू चीन्हा नाहिं।
कहें कबीर ता दास को, तीन ताप भरमाहिं।।

तीन तापों से परे कौन है? जो शरीर, मन और आत्मा के पीछे अपने अविनासी रूप का ज्ञान रखता है, उसे शरीर का दुख भी नहीं

सतायेगा, मन की चिंताऐं भी नहीं सतायेंगी और आत्मा का अज्ञान भी चिन्तित नहीं करेगा। इसलिये हम सतगुरू से प्रार्थना करते हैं कि हम पर ऐसी दया कर दो, अपनी रेडियेशन दे दो, ऐसी चेतना मुझमें जगा दो कि यह जो महा दुखदायी भवकूप है, यह हट जाये और हम असलियत को, सच्चाई को पहिचान जायें।

आपका है आसरा और आपका विश्वास है।
राधास्वामी तारिये, यह भी तुम्हारा दास है।।

ऐ मेरे अंशों! सतगुरू के दरबार में आकर अपना अहंकार मिटा देना चाहिए और सच्चे मन से गुरू का पूरा आसरा ग्रहण करना चाहिए। अगर आपको पूरा विश्वास है कि सतगुरू परम तत्व है तो आपने जब उसका पूरा असरा ले लिया तो फिर और कहीं जाने– भटकने की जरूरत नहीं रही। अगर विश्वास नहीं तो है तो जहां मर्जी चाहे भटकते रहो। तुम इस बात को अच्छी तरह से समझ लो कि तुम खुद भी परमतत्व हो। इसलिए मैं आपको अपना इष्ट मानता हूं।

अभी कृष्णा ने पूछा कप्तान साहिब से कि लोग मुझे कहते हैं कि तुम मनुष्य को गुरू मानकर पूजा करती हो। हम मनुष्य को ईश्वर कैसे माने? तो कप्तान साहिब ने जबाब दिया कि अगर पत्थर की मूर्ति को भगवान मानकर पूजते हो तो जीवित–जागृत मूर्ति तो उससे अच्छी ही है जो हमारे प्रश्नों का जबाब तो देती है। इसलिये अगर आपने पत्थर की मूर्ति पर विश्वास करके उसे प्रकट कर लिया तो क्या गुरू में पूरा विश्वास रखने वाला अपने गुरू की मूर्ति को प्रकट नहीं कर सकता, कर सकता है। हां जिसके विश्वास में कमी होती है, वह चूक जाता है। इसलिए पहले अपने विश्वास को दृढ़ करो। राधास्वामी अवस्था में रहने वाला गुरू, जो स्वयं जीवनमुक्त अवस्था में है, जिसकी धार आधार के साथ जुड़ी हुई है, उसे हम राधास्वामी कहते हैं। ऐसे गुरू के चरणों में जब तुम झुक जाओगे तो वह भी तुम्हें अपने जैसा ही बना देगा। तुम्हारे लोक–परलोक दोनों बन जांयेगे। यह महिमा है इस संतमत की जिसको मानवता धर्म भी कहते हैं। आज के लिए इतना सत्संग ही काफी है।

सबको राधास्वामी!

सत्संग परमसंत पुष्करदयाल जी महाराज

दुर्गापुर, दिनांक 5 जुलाई 2015

!! राधा–स्वामी.!!

गुरू से प्रेम करना कोई आसान काम नही है, हर कोई गुरू से प्रेम नही कर सकता है। सब संसार में फँसे हुए हैं और जो संसार में फँसा हुआ है वो गुरू से प्रेम नही कर सकता। गुरू कहता है तुम जब मेरे साथ चल सकते हो, जब तुम संसार से उदास हो जाओगे। संसार से उदास होने का मतलब है जब आप संसार से तृप्त हो जाओगे और तुमको संसार की कोई जरूरत ही नही पडेगी, तब तुम मेरे पास आ सकते हो और मेरे पास आने से क्या होगा? मुझसे प्रेम हो जाएगा, प्रेम ऐसे ही नही हो जाएगा, जब तुम गुरू के 100 प्रतिशत शरणागत् हो जाओगे फिर आपको गुरू से प्रेम हो जाएगा और फिर सारी जिम्मेवारी गुरू की हो जाती है फिर तुम गुरू की मौज में रहते हो, तुम्हारे अंदर एक परिर्वतन आ जाता है ऊपर (सिर) से लेकर नीचे (पैरों) तक, तुम्हारे सोचने का ढंग बदल जाएगा, तुम्हारे देखने का ढंग बदल जाएगा, तुम्हारे बात करने का ढंग बदल जाएगा, तुम्हारा व्यवहार बदल जाएगा, तुम एक नए आदमी बन जाओगे। तुम्हारे अंदर एक बहुत बडा परिर्वतन हो जाएगा, तुम्हारी सारी इच्छाएँ खत्म हो जांएगी, जब तुम्हारी सारी इच्छाएँ खत्म हो जांएगी, You Are God, फिर गुरू ने तुमको अपने जैसा बना दिया। तुम दुखी अपनी इच्छाओं की वजह से होते हो, जब एक इच्छा पूरी हो गई दूसरी इच्छा करतें हो, ये इच्छाएँ खत्म नही होती, इच्छा पूरी हो गई तो हम सुखी हो जाते हैं इच्छा पूरी नही हुई तो हम दुखी हो जाते है। जो ये इच्छाएँ हैं ये ही हमारे दुखों की जड है। जब गुरू ने तुमको अपने जैसा बनाया तुम्हारी सारी इच्छाएँ खत्म हो गईं तब क्या होता है? तब तुम्हारे मन के अंदर शांति आ जाती है, जिसके मन के अंदर शांति आ गई वही मालिक का रूप है। मालिक का रूप और कोई नही है। आप समझते हो मालिक ऊपर रहता है, वहाँ कुछ नही है। मालिक का रूप है मन में शांति। तुम्हारे मन में शांति आ

गई तुमको भगवानके दर्शन हो गए। भगवान शंकर को ध्यान करते हुए दिखाते हैं और हम उनको भगवान कहते हैं, इसका मतलब क्या है? इसका मतलब है उनके मन में शांति है।

भगवान कृष्ण ने अर्जुन से कहा अगर तुमको अंत समय में मेरा नाम याद आएगा तो तुम्हारी मुक्ति हो जाएगी, अर्जुन कहता है कृष्ण से ये तो अच्छी बात है मैं अंत समय में आपका नाम ले लूंगा और मेरी मुक्ति हो जाएगी। कृष्ण बोले ये इतना आसान नही है, जब तुमने सारी जिंदगी भगवान का नाम ही नही लिया तो तुम कैसे कह सकते हो कि अंत समय तुमको भगवान का नाम याद आ जाएगा। तुमको भगवान का नाम लेने का अभ्यास करना पडेगा, तभी अंत समय में भगवान का नाम आ जाएगा।

मेरी बीबी के अंत समय में मेरी Sister उसी के पास थी। जब मेरी Sister को पता लगा कि इसका अब अंत समय आ गया है, मेरी बीबी से पूछती है क्या तुम्हारे पति को बुलाया जाए, वो कहती है नही, क्या तुम्हारे बेटे को बुलाया जाए, कहती है नही, फिर किसे बुलाया जाए? कहती है महाराज जी (शब्दानंद जी) को बुलाओ। महाराज जी को पास फोन किया, दिन के 2 बजे थे, कोई साधन नही था, वो बस में बैठे और चल पडे। वे गेट पर पहुँचे और मेरी बीबी ने दम तोड दिया। उसको पता लग गया था कि महाराज जी आ गए हैं। अब अंत समय में मेरी बीबी को महाराज जी कैसे याद आ गए? क्योंकि उसने सारी उम्र गुरूओं की सेवा की थी, उन्होने मानव दयाल जी महाराज की सेवा की, स्वामी जी हमारे घर में 15 साल रहे, उनकी सेवा की, फिर शब्दानन्द जी महाराज की सेवा की। उनका जीवन गुरू की सेवा करते–2 बीता, इसलिए उनको अंत समय गुरू याद आ गया, क्यों? पति भी झूठा, बेटा भी झूठा, ना पति साथ देता है ना बेटा साथ देता है, साथ देता है सिर्फ सत्गुरू क्योंकि वो ही सच है

इस संसार में बाकी सब झूठ है, सब एक–एक करके साथ छोड देते हैं सिर्फ एक सत्गुरू साथ नही छोडता, अब देखो ये जिन्दा मिसाल है, ये कोई किताबी ज्ञान नही है। जो हमारा साथ छोड देता है वो सब झूठ है और जो हमारा साथ नही छोडता वही सच है, वो है सत्गुरू, बाकी सब एक–एक करके साथ छोड देते हैं।

किसी शायर ने कहा है **देखी जमाने की यारी, बिछडें सभी बारी–बारी।** एक–एक करके सभी साथ छोड देते हैं, फिर क्यों भरोसा करें इन पर, पता नही कब साथ छोड देगा, क्यों ना हम उस चीज पर भरोसा करें जो हमारा साथ नही छोडेगी। हम भरोसा करते हैं माँ–बाप, बेटा– बेटी, पति–पत्नी, कार, जायदाद, धन–दौलत पर और फिर हम दुखी रहते हैं। क्यों? माँ चली गई, हम दुखी हो गए, हाय! माँ चली गई, बाप चला गया, हाय! बाप चला गया, कार थी, रोड पर एक्सीडेंट हो गया, हाय! कार चली गई, हम रोने लगते हैं, दुखों का कारण यही हैं ना हमारे। हमारे दुखों का कारण क्या है? हम जिन चीजों पर विश्वास करते हैं वो चीजें हमसे बिछुड जाती हैं, फिर हम किस पर विश्वास करें? विश्वास करो सिर्फ एक सत्गुरू पर वो हमारा साथ कभी नही छोडता। मेरी बीबी को अंत समय सत्गुरू कैसे याद आ गया और सत्गुरू (शब्दानन्द जी) भी दुर्गापुर से चल पडे, धक्के खा–खाकर और और हमारे घर के गेट के अंदर घुसे और मेरी बीबी ने दम तोड दिया, उसको सिर्फ महाराज जी का इंतजार था, जैसे उसको पता लगा कि महाराज जी आ गए हैं उसने दम तोड दिया। इससे जिन्दा मिसाल क्या चाहिए आपको, इससे हमको क्या सबक मिलता है? इससे हमको सबक मिलता है कि अंत समय में हम सत्गुरू को याद करें, लेकिन कैसे याद करें? सारे जन्म तो बेटा, बेटी करते रहे हम, सारे जीवन में हाय!–हाय! करते रहे, ये मेरा मकान, ये मेरी दुकान, ये मेरा पति, ये मेरी दौलत, ये मेरी कार,

रहता कोई नही, आगे–पीछे सब एक–एक करके चलें जाते हैं। आपको ये जन्म मिला है कुछ कर्मों के कारण मिला है, आपको ये कर्म पूरे करने पडेंगे, अगर आपके घर में कोई बेटी हुई है तो उसके सारे कर्म पूरे करने पडेंगे, अगर नही करोगे तो कर्म आपको छोडेंगे नही, आपके पीछे पडेंगे अगर यहाँ नही पकडा तो आगे पकडेंगे, लेकिन पकडेंगे जरूर। लोग क्या करते हैं? जब उनके पास मुसीबत आती है, वे तांत्रिक के पास जाते हैं तांत्रिक क्या करता है? वो आपके कर्मों को काट नही सकता है, वो आपके कर्मों को थोडा आगे खिसका देता है और हम समझते हैं कि हमारे कर्म टल गए, आपके कर्म टले नही, वो आगे चलकर आपको और भी जोर से पकडेंगे, जरूर पकडेंगे । एक चोर चोरी करता है उसको जज के पास ले जाते है, जज उसको 5 साल की सजा देता है, 4 साल के बाद उसको मौका मिलता है और वो भाग जाता है जेल से, पुलिस उसे फिर पकड कर लाती है और फिर से जज के पास ले जाती है, जज कहता है अच्छा तुम्हारी सजा 5 साल थी और तुम 4 साल के बाद भाग गए, ठीक है अब तुम्हारी सजा 10 साल है। ये जज को आइडिया कहाँ से आया? ये आइडिया जज को अध्यात्म से आया, इसी तरह अध्यात्म में भी अगर हम अपने कर्मों से भागना चाहें तो भाग नही पाएँगे, कभी किसी तांत्रिक के पास मत जाना, अपने कर्मों को हँसी–हँसी, खुशी–खुशी भुगत लो, इसी में आपकी भलाई है, अपने कर्मों को हल्का करते जाओ और जो अपने कर्मों की टोकरी साथ लाए हैं उसे यहीं खाली करके जाओ, आगे के लिए एक भी कर्म मत रखो। महाराज जी कहते थे One Mark Less One Year More, परीक्षा में आपको पास होने के लिए 33 नम्बर चाहिए और 32 नम्बर आ गए, 1 नम्बर कम आ गया, फिर वही किताबें फिर वही Teacher, फिर एक साल वही पापड बेलने पडेंगे, और जिसके सारे कर्म खाली हो गए उसकी मुक्ति। भागवत में लिखा है जब कृष्ण ने कंश को मारा तो कंश की मुक्ति हो गई, कैसे हो गई मुक्ति? कृष्ण ने हजारो लाखो आदमी मार दिए, क्या सबकी हो गई मुक्ति? सबकी मुक्ति नही हुई, लेकिन कंश की मुक्ति क्यों हो गई? भागवत में लिखा है जब कंश को पता लगा कि कृष्ण मेरी

मृत्यु है तो हर समय उसको कृष्ण का ध्यान रहने लगा, 24 घण्टे उसको कृष्ण का ध्यान था कि कब कृष्ण आएगा और मुझे मारेगा, तो 24 घण्टे उसे गुरू का ध्यान रहता था, यही कारण है उसकी मुक्ति हो गई। हमारे कर्म कैसे छूटेगें? अगर हम भी सत्गुरू को 24 घण्टे अपने ध्यान में रखते हैं तो अंत समय में अपने आप ही सत्गुरू का ध्यान आएगा और हमारी मुक्ति हो जाएगी।

शब्दानन्द जी महाराज कहते थे, जब हमारा अंत समय आता है, तो हमारे सामने एक रील चलती है और जब वो रील चलती है तो हमारी आँखों से आँसू टपकने लगते हैं, अरे मैने अपनी जिन्दगी में क्या किया? कौडी के भाव मैंने अपनी जिन्दगी को बेच दिया, शब्दानन्द जी महाराज हर सत्संग में यही कहते थे। अगर हम सारी जिंदगी सत्गुरू का नाम लें तो हमारी आँखों में कोई आँसू नही आएगा। उस टाईम हम हँसते–हँसते चले जाएँगे और हमारी मुक्ति हो जाएगी, क्यों? क्योंकि सत्गुरू का नाम लेते–लेते हमारे सारे कर्म कटते गए और हमारे कर्मों की टोकरी खाली होती गई। तो इस जन्म–मरण की चककी से छूटने का यही एक ही तरीका है सत्गुरू का नाम जपो, 2–2 घण्टे, 2½ –2½ बैठते हो ध्यान में, स्वार्थी हो तुम, तुम अपना भला चाहते हो, इससे अच्छा है 2½ घण्टा आँख खुली रखो सत्गुरू का ध्यान रखो और किसी का भला करो, किसी प्यासे को पानी पिलाओ, किसी भूखे को खाना खिलाओ, किसी नंगे को कपडे पहनाओ, तो वो समय तुम कमाओगे, बाकी 2½ घण्टे ध्यान में बैठकर तुम क्या करोगे? स्वार्थी हो तुम सिर्फ अपना ही भला चाहते हो, अरे ओरो का भी भला करो, अगर ओरों का भला करोगे तो तुम्हारी तरक्की और भी जल्दी हो जाएगी। खुली आँख से ध्यान करो, खुली आँख से दर्शन करो, कैसे?

नही रूप कोई, हैं सब रूप तेरे।

सब उसी का रूप हैं, खुली आँख से सबके दर्शन करो और सबका भला करो, किसी का दिल मत दुखाओ, किसी को तकलीफ मत दो और इस तरह तुम्हारे कर्म कटते जाएंगे। ।। राधा–स्वामी ।।

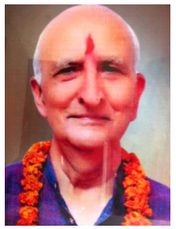

सत्संग परमसंत पुष्करदयाल जी महाराज 28 जून 2015 (सै0.10, फरीदाबाद)

मंगलदेव जी ये शब्द बहुत प्रेम से गाते थे उनके मुख से ये शब्द बहुत प्यारा लगता था आज हम इसी शब्द को फिर से दोहराते हैं।

गुरू के दर्शन के बिना, अब नींद तक आती नही।
जग की वस्तु कोई भी, मन को मेरे भाती नही।।
आओ प्यारे देवो दर्शन, हूँ विकल मैं रात दिन।
ताकती हूँ राह तेरी, छवि नजर आती नही।।
मैं तो तेरी शरण आई, तुमको मेरी लाज है।
छोडकर तेरी शरण मै, अब कहीं जाती नही।।
तेरा ही विश्वास मुझको, एक तेरी आस है।
तू है साथी एक मेरा और कोई साथी नही।।
मेटकर त्रयताप चित को मेरे करदे आप शान्त।
राधा स्वामी भक्ति दीजे, शक्ति घवराती नही।।

गुरू से जब प्रेम हो जाता है तो ये संसार सारा फीका लगने लगता है,। यही कहा गया है इस शब्द में ''गुरू के दर्शन के बिना अब नींद तक आती नही'' जब गुरू से प्रेम हो जाता है तब नींद गायब हो जाती है, फिर नींद नही आती, फिर संसार की वस्तु मन को नहीं भाती संसार फीका लगता है। जब एक बार गुरू से प्रेम हो जाए फिर देखो मजा! कभी आपने गुरू के लिए दो आँसु बहाए हैं? संसार के लिए तो हजारों आँसु बहाते रहते हो, कभी गुरू के लिए दो आँसू बहाओ। सतगुरू के लिए जो कोई आँसू बहाता है सतगुरू उसको एक–एक बूँद का हिसाब देता है। संसार के लिए आप कितने भी आँसु बहाओ सब गटर में। लेकिन सतगुरू के लिए कोई आँशु बहा नही सकता, अपने बेटे के लिए, अपने पति के लिए तो हजारो आँसू बहा दोगे लेकिन सतगुरू के लिए आप एक आँसू नही बहाते। क्यों नही बहाते हम सतगुरू के लिए आँसु क्योंकि हमको सत्गुरू से प्रेम नही है। अगर

हमको सत्गुरू से प्रेम हो तो हमारी आँखों से आँसु टपकने लगेंगे अपने आप। हम सतगुरू को कैसे मापते हैं? हमारे पास सत्गुरू को मापने का एक ही तराजू है कि इसमें कितनी चमत्कारी ताकत है, ये हमारे लिए कितना चमत्कार कर सकता है, ये हमारी दुकान चला सकता है कि नही ये हमारी बेटी की शादी करा सकता है कि नही, यही एक तरीका है हमारे पास जिससे हम सत्गरू को मापते हैं। इसमें दोष आपका नही है, इस संसार की शुरू से बनावट ही ऐसी है। लेकिन सत्गुरू को मापने का तरीका ये नही है, सत्गुरू को मापने का तरीका एक ही है कि सत्गुरू हमको कितना ज्ञान दे सकता है, क्या ये हमको तार सकेगा या नही? इस तराजू से तोलो सत्गुरू को फिर देखो मजा! लेकिन हम उस तराजू की तरफ ध्यान नही देते। सत्गुरू कहता है आओ मेरे पास मैं आपको ज्ञान देता हूँ लेकिन आप कहते हो गुरू जी आप अपना ज्ञान अपने पास रखो पहले मेरी दुकान चलाओ फिर उसके बाद आपका ज्ञान सुनुंगा। ये है आपके मापने का तरीका, इन तरीकों को आपको बदलना पडेगा, सत्गुरू के पास जाओ सिर्फ ज्ञान के लिए।

कबीर सहाब कहते हैं–

चल सत्गुरू की हाट, ज्ञान बुद्धि लाईये।

चलो सत्गुरू की दुकान पर! आटा चावल लेने नही, ज्ञान बुद्धि लेने के लिए, इसी स्केल से हमको सत्गुरू को मापना है, ज्ञान बुद्धि के स्केल से। सत्गुरू के पास जाओ किस भाव से? कि सत्गुरू हमको तारेंगे। **"गुरू तारेंगे हम जानी"** यही भाव लेकर सत्गुरू के दरबार में जाओ।

आपने भागवत पढी होगी? उसमें एक जगह लिखा है जब कृष्ण ने कंश को मारा तो कंश की मुक्ति हो गई। कंश की मुक्ति क्यों हो गई? मुक्ति इसलिए हो गई जब कंश को पता चला कि कृष्ण मुझे मारेगा जबसे 24 घण्टे कृष्ण उसके ध्यान में रहता था और जब कृष्ण ने उसको मारा उसकी मुक्ति हो गई। मैं भी चिल्ला–2 कर कह रहा हूँ, हर सत्संग में यही कहता हूँ कि 2घण्टे 2½घण्टे ध्यान में बैठकर कुछ नही मिलेगा,मुझसे गुलामी लिखवा लो जो ये कहता है कि मुझे 2½ घण्टे ध्यान लगता है, कोई नही लगा सकता। पहले सतयुग में हजारों साल ध्यान लगता था। राजा दशरथ ने दस हजार साल तपस्या की है। लेकिन ये आज कलियुग है, समय के साथ सब बदल जाता है गुरू भी बदल जाता है और गुरू की शिक्षा भी बदल जाती है। सन्त सत्गुरू

वक्त उसको बोलते हैं जो आज के वक्त की शिक्षा दे दे और आज के वक्त की शिक्षा क्या है? 2घण्टे ध्यान में बैठना (Waste of Time) समय की बरबादी है, अपने आप को धोखा देना और लोगों को धोखा देना है, अरे ये तो 2घण्टे ध्यान में बैठता है। कबीर साहब जब गए अपने गुरू रामानन्द के पास तो उनको चौकीदार ने रोका, कबीर साहब ने कहा मुझे गुरू जी से मिलना है तो चौकीदार ने कहा आप उनसे नही मिल सकते हो, वो ध्यान कर रहें है। कबीर साहब कहते हैं वो ध्यान कर रहें है? वो तो जूते खरीद रहें हैं, उपर रामानन्द सुन रहे थे, उन्होने कहा बुलाओ इसे और कहा मैं सच में ही जूते खरीद रहा था, कल मैं जूते खरीद कर लाया था वो पैरों में बराबर नही आ रहे थे, मैं सोच रहा था कि बाजार जाऊँगा और जूते बदलकर लाऊँगा। ये है रामानन्द जी का हाल तो फिर हम किस खेत की मूली हैं। तो फिर आज के वक्त का भजन–कीर्तन क्या है? आज के वक्त का भजन कीर्तन है 24 घण्टे उठते बैठते, चलते फिरते, काम करते, खाना खाते हर समय गुरू का ध्यान रखो, यही है आज के जमाने का भजन–कीर्तन। यही कबीर साहब कहते हैं–

आँख ना मूँदू कान ना रूँदू, काया कष्ट ना धारूँ।
खुले नयन मैं हँस–हँस तेरा, सुन्दर रूप निहारूँ।।

कबीर साहब खुले नयन से ध्यान करते थे, उनको सब मालिक का रूप नजर आता था। सन्त सत्गुरू वक्त की शिक्षा क्या है? आज हम जो कर सकते हैं, आज हमसे जो हो सकता है, हम वही करें। आज के जवानो में किसके पास टाईम है, कौन 2½ घण्टे ध्यान कर सकता है किसके पास इतना टाईम है, खाना खाने के लिए टाईम नही उनके पास, शनिवार को सारा फ्रीज भरकर रखते हैं (बना हुआ खाना) ऑफिस के टाईम जल्दी से फ्रीज में से खाना निकाला, माइक्राओवन में खाना गरम किया, खाया और निकले। कहाँ करेगा वो 2½ घण्टे ध्यान, वहाँ पति और पत्नि शनिवार को मिलते हैं। क्यों? आदमी जाता है रात की शिफ्त में और बीबी जाती है दिन की शिफ्ट में, वो दोनो शनिवार को मिलते हैं और दिन क्या करतें हैं वो? स्टोर और मॉल में जाते हैं और वहाँ से बनी हुई चपाती खरीदते हैं, वेज और नॉनवेज खरीदते हैं और उनको फ्रीज में रख देते हैं, उनके पास टाईम नही है खाना बनाने का, सुबह खडे हुए, नहाए, कपडे पहने, फ्रीज से खाना निकाला, माइक्रो–ओवन

में गर्म किया, खाया और निकले ऑफिस के लिए। ये है आज का जमाना, इसको बोलते हैं कलियुग, अब आप उस आदमी को कहोगे कि ध्यान भजन कर, वो कैसे ध्यान भजन करेगा। उसके लिए कबीर साहब ने कहा है तुम कोई भी काम करो ध्यान अपने सत्गुरू का रखो, कैसे? आप समझते हैं कि हो नही सकता? हो सकता है, आज के जमाने में हो सकता है, कैसे? जब चार–पाँच औरतें निकलती हैं गांव से, उनके ऊपर एक बडा मटका उसके ऊपर एक छोटा मटका होता है और जब वो जब वो पानी भरकर लाती हैं रास्ते में चलती रहती हैं दुनिया भर की बातें करती रहती हैं लेकिन ध्यान मटके पर होता है कहीं ये गिर ना जाए। जब चलते–2 बात करते–2 उनको मटके का ध्यान रहता है तो हमें क्यों नही कर सकते, चलते–2, बात करते–2 उस मालिक का ध्यान रह सकता है अगर हम चाहें तो, लेकिन हम काल के चक्र में फँसे हैं।

कल शाम की घटना बताता हूँ मैं पार्क में बैठा था, एक आदमी आया और मेरे पास बैठा गया और अपनी प्रोपर्टी गिनाने लगा, मेरे पास इतने प्लॉट हैं इतने मकान हैं, इतनी कारें हैं पलवल में 2000 वीघा जमीन है। मैंने उससे पूछा आप कहाँ रहते हैं, उसने बताया में यहाँ बी.पी.टी.पी. में किराये पर रहता हूँ मैंने कहा आपके पास इतने मकान हैं फिर आप यहाँ किराये पर क्यों रहते हैं? उसने कहा मेरे बेटे की तबीयत खराब हो गई उसका लीवर डैमेज हो गया, डॉक्टर ने जगह बदलने को कहा है उसकी 1 लाख रू0 महीने की दवाई आती है। मैंने उससे पूछा आपके बेटे का लीवर डैमेज कैसे हो गया, वो चुप हो गया, मैंने कहा वो शराब पीता था, उसने कहा हाँ वो सब कुछ करता था। मैंने कहा आपके पास इतने पैसे हैं, इतनी गाडियाँ हैं, क्या आपके पास मन की शान्ती है? उसने कहा नही है, मन में शान्ति नही है। अब बताओ इतना पैसा होते हुए भी उसके मन में शान्ति नही है। अगर उसके पास मन की शान्ति होती तो उसके पास जो करोडो की जायदाद है उसको लात मारता, लेकिन उसने मन की शान्ति का अभी स्वाद चखा ही नही हैं।

भगवान क्या है? आप कहते हो, हे–भगवान मुझको दर्शन दे दो, वो कौन सा भगवान है? क्या दर्शन देगा आपको? कोई रूप है उसका? कोई रूप नही है उसका,

नही रूप कोई, हैं सब रूप तेरे।

उसका कोई रूप नही है, कोई दर्शन नही देगा वो, हाँ उसका दर्शन है मन की शान्ति! अगर तुम्हारे मन में शान्ती आती है तो तुमको भगवान के दर्शन हो गए। क्यों? क्यों भगवान के दर्शन हो गए? मन की शान्ति कब आती है? मन की शान्ति तब आती है जब हमारी सब इच्छाएँ खत्म हो जाती हैं भगवान से मिलने की भी इच्छा खत्म हो जाती है। जब हमारी सब इच्छाएँ खत्म हो जाती हैं तब हमारे मन मे शान्ती आती है, तब हमको लगता है अरे मैं तो कुछ और हूँ, मैं वो नही हूँ मैं प्रेमसुख नही हूँ मैं कुछ और ही हूँ और वो कुछ और कौन है? वो है भगवान, वो है मालिक, वही है मालिक का रूप, तुम्हारे मन में जब शान्ति आ गई तो तुम भगवान बन जाते हो, तुम स्वयं भगवान हो, तुमको भगवान को ढूँढने की जरूरत नही है। अगर भगवान भी सामने आएगा और कहेगा मैं भगवान हूँ तो तुम कहोगे–तू भगवान नही है, भगवान तो मेरे अन्दर हैं क्योंकि मेरे मन के अंदर शान्ति है।

मजनू को प्रेम हो गया था लैला से, लैला की शादी कहीं और हो गई थी और मजनू भटकते–भटकते लैला के गाँव जा पहुँचा और वो वहाँ एक पेड के नीचे पडा रहा, कोई पहचान गया उसको और वो दौडते–दौडते गया लैला के पास और कहा–लैला देख तेरा मजनू आया है, वो वहाँ पेड के नीचे लेटा हुआ है। लैला दौडी–दौडी गई उसके पास और कहा–मजनू मजनू देख मैं तेरी लैला हूँ। मजनू ने आँखे खोली और उसको देखकर बोला तू मेरी लैला नही है, मेरी लैला यहाँ (मेरे हृदय में) है। क्यों? क्योंकि लैला–लैला करते–करते उसको मालिक का रूप समझ आ गया था लैला के रूप में, जब उसको मालिक का रूप नजर आया लैला के रूप में तो फिर संसार की लैला क्या थी? संसार की लैला फीकी पड गई, इसलिए उसने कहा तू मेरी लैला नही है, मेरी लैला मेरे अंदर है। इसी तरह जब हमारे अंदर शान्ति आ जाती है, तो भगवान भी आ जाए तो आप उसको कहोगे तू भगवान नही है, मेरा भगवान इधर (मेरे हृदय मे) हैं। मन की शान्ति क्या है? मन की शान्ति है उस मालिक का रूप। जिसको मन की शान्ति मिल गई उसको समझो मालिक मिल गया। मन की शान्ति कैसे मिलती है? जब हमारी सब इच्छाएँ खत्म हो जाएँ, तब हमारे मन में शान्ति आती है और वही मालिक का रूप है।

!!राधा–स्वामी!!

आचार्यश्रेंष्ठ श्री अजय कपिला के विचार

मानवता धर्म

मानवता क्या है?

मानव शब्द मनु तत्व से निकला है जिसका अर्थ है शाश्वत या अविनाशी तत्व जिसे विशुद्ध आत्मा या सुरत भी कहते हैं। हम सब अपने आपको मानव तो कहते हैं परन्तु क्या हम वास्तव में मानव हैं? हम अपने आपको मानव तभी कहने के अधिकारी बन सकते हैं जब हम मानवता धर्म का पालन करें। अब यह मानवता धर्म क्या है? जैसे प्रत्येक वस्तु का धर्म उसके जन्म के साथ ही जुड़कर आता है जैसे नमक का धर्म है नमकीन होना, विष का धर्म है मृत्यु देना, अमृत का धर्म है अमृत्व प्रदान करना, सूर्य का धर्म है प्रकाश एवं ताप देना, जल का धर्म है तरलता एवं ठंठक देना, वायु का धर्म है स्पर्श देना, आकाश का धर्म है शब्द आदि–आदि इसी प्रकार मानव का धर्म है मानवता अर्थात् प्रत्येक मानव दूसरे को अपने जैसा मानव समझ कर व्यवहार करे। जब हम अपने मानवता धर्म को भूल जाते हैं तो अपने असली स्वरूप जो शरीर, मन, बुद्धि से परे है उसे भी भूल जाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि हमें तीन ताप सताने लगतें हैं। वे तीन ताप हैं–शारीरिक दुख, मानसिक क्लेश एवं आत्मिक अज्ञान। मानवता का अर्थ है पूर्णता। देवी–देवता पूर्ण नहीं हैं क्योंकि उनमें सकंल्प करने की स्वतन्त्रता नहीं है। मानव पूर्ण है क्योंकि वह पूर्णतत्व से निकला है। उपनिषद में कहा गया है–

ओ३म् पूर्णमिदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

मानव मालिक के संकल्प का परिणाम है जिसने आदि मनु को पैदा किया था। अतः जो कुछ भी ब्रह्माण्ड में है उस सबका लघु रूप मानव के पिंड़ में भी है। यों तो इस सृष्टि में जो कुछ भी विद्यमान है यहां तक कि माया या प्रकृति भी सब उस मालिक से ही निकले हैं परन्तुं इस सृष्टि में मानव को सर्वश्रेष्ठ जीव होने का गौरव प्राप्त है। इसका प्रमाण है कि एक बार नैमिषारण्य क्षेत्र में अठासी हजार ऋषि–मुनि एकत्रित हुए। उस सभा की अध्यक्षता महर्षि वेद–व्यास जी कर रहे थे। वहां एक प्रश्न उठाया गया कि इस जगत् में सबसे श्रेष्ठ वस्तु क्या है? एक ऋषि ने उठकर कहा कि

परात्परब्रह्म परमतत्वाधार सबसे श्रेष्ठ है। लेकिन यह उत्तर सबको मान्य नहीं हुआ क्योंकि परमतत्वाधार तो जगत् से बाहर है और वह ऊपर बैठा हुआ किसी को कुछ भी लाभ नहीं पहुंचा सकता। तब दूसरे ऋषि ने कहा कि भगवान शंकर जगत् में श्रेष्ठ हैं, तीसरे ने कहा कि विष्णु श्रेष्ठ हैं। किसी ने शक्तिरूपा देवियों को सर्वश्रेष्ठ कहा तो किसी ने कुछ और को श्रेष्ठ कहा परन्तु जब इनमें से कोई भी उत्तर सर्वमान्य नहीं हुआ और सब मौन हो कर बैठ रहे तो अन्त में महर्षि वेद–व्यास जी ने स्वयं उत्तर देते हुए कहा, **"गुह्यतरम् इदम् ब्रुविमि नहिं मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।"** अर्थात् मैं तुम्हें सबसे गुप्त रहस्य बता रहा हूं कि इस जगत् में मनुष्य से बढ़कर श्रेष्ठ अन्य कोई भी कुछ भी नहीं है।

'मानवता' कोई नया नाम नहीं है। हां इतना अवश्य है कि स्पष्ट रूप से इस शब्द का प्रयोग पूर्व में नहीं किया गया; हालांकि इसका वर्णन कहीं–कहीं अवश्य मिलता है जैसे बौद्ध धर्म, जैन धर्म, ईसाई धर्म, इस्लाम धर्म आदि में। इन धर्मों के असूलों में कहा गया है कि मनुष्य को ऐसा व्यवहार दूसरों के साथ नहीं करना चाहिए जैसा वह अपने साथ होना पंसद नहीं करता। यह बात मानवता धर्म की ओर इशारा करती है। कबीर साहिब ने मानव धर्म के बारे में भी कुछ ऐसा ही कहा है–

मानव बनकर ना जिया, जिया तो डांगर ढ़ोर।
जीव ठिकाने ना लगा, लगा तो हाथी घोड़।।

यदि मनुष्य मानव बन कर नहीं जीता–हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, मां–बाप, भाई–बहन, पति–पत्नि, कर्मचारी–अधिकारी, राजा–प्रजा, मित्र–वैरी आदि बनकर जीता है तो वह पशु समान है। कबीर साहिब आगे कहते हैं–

गुरू पशु, नर पशु, त्रिया पशु, वेद पशु संसार।
मानुष वाको जानिये, जा में विवेक विचार।।

मानव में और पशु में अन्य सब बातें समान होती हैं केवल बुद्धि या ज्ञान या विवेक ही ऐसा गुण है जो पशुओं में नहीं पाया जाता। इस बुद्धि या ज्ञान या विवेक के द्वारा ही मानव मानवता धर्म का पालन करता हुआ अन्य सभी प्राणीयों से श्रेष्ठ गिना जाता है। कहा है–

आहार–निद्रा–भय मैथुनं च समानयेतत् पशुर्भिनराणाम्।

ज्ञानोहिते शामधिको विशेषः, ज्ञानेन हीना पशुभिसमानाः।।

अर्थात् खाना–पीना, सोना, बच्चे पैदा करना यह सब तो मनुष्य और पशु में एक समान हैं। इसलिए यदि मानव को पशु से श्रेष्ठ कहा गया है तो उसका कारण है ज्ञान या विवेक जो पशु में नहीं होता, केवल मनुष्य में ही होता है। जो मनुष्य ज्ञान–विवेक का प्रयोग नहीं करता वह पशु के समान है। विवेक–ज्ञान कहता है कि आप अपने घर में और घर के बाहर समस्त प्राणियों के साथ प्रेम का व्यवहार करो तो आप सुखी रह सकते हो और तभी दूसरे भी सुखी रख सकते हैं।

साधारणतया हमारी दृष्टि इस स्थूल शरीर, स्थूल जगत् तथा भौतिक पदार्थों तक ही सीमित रहती है। हम इनको ही सब कुछ समझ कर इनमें इतना फंस जाते हैं कि हमारा ध्यान हमारे मन और आत्मा की ओर जाता ही नहीं। वास्तव में यह देह हमारा असली अस्तित्व नहीं है। इस देह के अन्दर तीन चीजें मौजूद हैं–स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर, और कारण शरीर। ये तीनों मिलकर काम करते हैं और इनमें इतनी घनिष्ठता है कि एक को दूसरे से अलग करना कठिन है। इन तीनों के मिले बिना कोई भी काम मनुष्य नहीं कर सकता। परन्तु इन तीन के अलावा एक शक्ति और भी है जो इन सब के कार्यों का साक्षी है और वह है हमारा निज स्वरूप, हमारा निज अस्तित्व। इसका पता लाखों में नहीं बल्कि करोड़ों मे से किसी एक को लगता है "नानक कोटिन में कोऊ एक"। इन तीनों शरीरों की संक्षिप्त व्याख्या इस प्रकार है–

स्थूल शरीर– यह स्थूल शरीर जो प्रत्यक्ष में दिखाई देता है यह मनुष्य शरीर का एक भाग है। इसलिए केवल इस देह को मनुष्य नहीं कह सकते। स्वप्न और सुषुप्ति में यह निष्क्रय हो जाता है फिर भी कोई शक्ति है जो काम करती रहती है।

सूक्ष्म शरीर– इस स्थूल शरीर में एक सूक्ष्म शक्ति मन है जो दिखाई नहीं पड़ता परन्तु जाग्रत एवं स्वप्न तक में इसका कार्य होता रहता है। इस मन के बिना शरीर तथा दस इन्द्रियां कोई कार्य नहीं कर सकतीं। पहले हर काम का विचार मन में आता है और वहां से वह मन शरीर तथा इन्द्रियों को गति देता है जिससे ये काम करने लगती हैं। इस मन का अनुभव स्वप्नावस्था में किया जा सकता है,। इस मन का अनुभव स्वप्नावस्था में किया जा सकता है जिस समय वह अपनी अनेक प्रकार की क्रियायें करता है परन्तु जागने

पर उसका कोई अस्तित्व नहीं रहता। गहरी नींद में जाकर मन भी कोई कार्य नहीं करता। अतः यह मन भी किसी अन्य शक्ति के आधीन है जिससे इसको शक्ति मिलती है।

कारण शरीर– यह बीज रूप है, आत्मा है, ज्योति निरंजन है, प्रकाश है। मन और देह की रचना प्रकाश से होती है। इसे यों समझ लो कि यदि सूर्य का प्रकाश पृथ्वी पर न आये तो कोई वस्तु उत्पन्न नहीं हो सकती। इसका अनुभव गहरी नींद में जाकर होता है। गहरी नींद से जागने पर मनुष्य यह प्रतीत करता है कि आज बड़े आनन्द की नींद आई। अर्थात् उस अवस्था में आनन्द ही आनन्द है।

प्रत्येक मनुष्य जो कुछ भी करता है आनन्द या खुशी लेने के लिए ही करता है परन्तु वह उस खुशी या आनन्द को स्थूल पदार्थों में टटोलता है, इसलिए उसे खुशी या आनन्द नहीं मिलता क्योंकि इनमें मूलतः खुशी या आनन्द देने की क्षमता है ही नहीं। जब मनुष्य दूसरे जीवों के माध्यम से खुशी प्राप्त करना चाहता है तो उसे वहां भी खुशी नहीं मिलती क्योंकि वे सब जब स्वयं ही खुश नहीं हैं तो इसको खुशी कैसे दे सकते हैं। इसलिए मनुष्य को खुशी के स्थान पर दुख और अशान्ति ही मिलती है।

यह शरीर सत है, चित्त चिन्तन या मनन करने वाला सूक्ष्म शरीर है और आनन्द देने वाली शक्ति आत्मा है। आत्मानन्द भी एक प्रकार का अहंभाव है। समय आता है जब प्रकाश और शब्द में रहने वाले महापुरूष भी अपने आनन्द के स्तर से गिर जाते हैं।

विभिन्न दृष्टिकोणों से मानव जीवन का विश्लेषण–

मानव शारीरिक जीवन के दृष्टिकोण से– हमारा जीवन पिता के वीर्य से बना। इसमें हम खुर्दबीन से देखे जाने वाले कीड़े थे। वीर्य रूधिर से और रूधिर खाद्य पदार्थों से बनता है। ये खाद्य पदार्थ पृथ्वी से उत्पन्न होते हैं और जब तक सूर्य की किरणें पृथ्वी पर न पड़ें पृथ्वी खाद्य पदार्थ पैदा नहीं कर सकती। इसलिए हम सब की उत्पत्ति प्रकाश से हुई मानी जाती है तथा सूर्य एवं तारागणों की किरणें जीवन कहलाती हैं।

मानव भाव तथा विचार के दृष्टिकोण से– विचार मनुष्य के भावों का स्पष्टीकरण है। भाव विचारों के कारण उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक शरीर चाहे वह छोटा है या बड़ा है उसके अन्दर से धनात्मक और ऋणात्मक शक्ति

की धारें, लहरें या किरणें हर समय निकलती रहती हैं और शरीर के इर्द–गिर्द मण्डल बनाती रहती हैं, जिसको विज्ञान भी मानता है।

जब एक शरीर दूसरे शरीर के मण्डल में आता है तो उन शरीरों की शक्तियां आपस में टकराती हैं जिसके कारण इनमें परिवर्तन होता रहता है। इसके परिणमस्वरूप प्रत्येक शरीर के अपने गुण, कर्म, स्वभाव या शक्ति में नई प्रकार की लहरें पैदा होती हैं। इसका नाम भाव है। इन भावों की अभिव्यक्ति विचारों से शरीरिक गति के रूप में होती है।

मनुष्य का मस्तिष्क बहुत ही सूक्ष्म पदार्थ का बना हुआ है जिस पर देखने, सुनने, छूने, चखने, सूंघने आदि की क्रिया का प्रभाव पड़ता रहता है या यह इनके प्रभाव को ग्रहण करता रहता है। चूंकि प्रत्येक मनुष्य का मस्तिष्क भिन्न–भिन्न प्रकार का हुआ करता है इसलिए एक ही वाह्य घटना का प्रभाव भिन्न–भिन्न मनुष्यों पर भिन्न–भिन्न प्रकार से पड़ता है। यह प्रकृति का नियम है कि एकता में अनेकता और भिन्नता में अभिन्नता बनी रहे और बनी रहती है।

मानव धार्मिक दृष्टिकोण से–एक बच्चा जिस प्रकार के वातावरण में पलता है, वह उन्हीं विचारों को ग्रहण करने को विवश है। वही विचार और प्रभाव धीरे–धीरे परिपक्व होते हुये एक दृढ़ विश्वास के रूप में बदल जाते हैं। यदि उस व्यक्ति को दूसरे वातावरण में रखा जाता तो वह उस वातावरण के संस्कारों को ग्रहण कर लेता है। इससे यह सिद्ध होता है कि मनुष्य किसी भी धर्म के साथ किसी भी प्रकार का लगाव लेकर पैदा नहीं होता। जिस धर्म के विचार उसको संगत में मिलते हैं वह उसी धर्म का बाना पहनकर धार्मिक बन जाता है। विभिन्न धर्मावलम्बियों में आपस में जो मतभेद है इसका मुख्य कारण यह है कि मनुष्य को यह ज्ञान नहीं है कि धर्म किसे कहते हैं। धार्मिक मतभेद का एक मुख्य कारण धार्मिक ग्रंथ हैं जिनमें सच्चाई तो लिखी है परन्तु उसकी समझ न होने के कारण प्रत्येक धर्म यह दावा करता है कि केवल उसी का धर्मग्रंथ ईश्वरीय प्रेरणा है; सब उसी को माने। यह कैसे संभव हो सकता है? इसलिए धार्मिक पक्षपात और खून–खराबा होता रहता है। यद्यपि उन महापुरूषों की ऐसी कोई नीयत नहीं थी जिन्होंने ये ग्रंथ लिखे थे तथापि उनके संकुचित विचार वाले अनुयायी अज्ञानवश ऐसा ही समझते हैं और आये दिन झगड़ा–फसाद और खून खराबा करते रहते हैं।

मानव सत् की दृष्टि से– प्रत्येक मनुष्य में सत की अंश आत्मा प्रकाश रूप में रहती है फिर भी प्रत्येक मनुष्य आध्यात्मिक नहीं बन जाता क्योंकि जब तक कोई साधन–अभ्यास करके अपना स्वयं का अनुभव प्राप्त नहीं कर लेता तब तक वह आध्यात्मिक नहीं बन सकता। देश के अन्दर जब इस प्रकार के मनुष्यों की संख्या अधिक होती है तब उनकी धारों से या लहरों से सुख–शान्ति का वातावरण चारों ओर फैलता जाता है।

मानव शब्द की संक्षिप्त व्याख्या के बाद अब मानवता की ओर चलते हैं। बाबा फकीर कहते हैं कि जो सत, चित और आनन्द के प्रभावों में नहीं फंसता किन्तु इन प्रभावों को खेल समझता है उसको मानवता कहते हैं। दूसरे वर्तमान युग में कुल धर्म एवं सम्प्रदाय चूंकि एक विशेष समुदाय तक ही सीमित हो गये हैं और प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग दूसरे सम्प्रदाय के लोगों से द्वेष एवं घृणा करते हैं, इसलिए मानव जाति आपस में बंट गई है। इस लिहाज से मानव जाति को इस संकट से उबारने के लिए तथा उसी के नाम से उसके मूल धर्म का ज्ञान कराने के लिए 'मानवता' शब्द का प्रयोग किया गया है ताकि हर वर्ग या सम्प्रदाय वाले इसे स्वीकार करते हुए तथा मानवता के सिद्धान्तों का पालन करते हुए सुख शान्ति से जीवन व्यतीत कर सकें।

परम दयाल बाबा फकीर चन्द जी महाराज कहते थे कि यों तो कहने के लिए प्रत्येक मनुष्य मानव है परन्तु जब तक वह मानवता के असूलों पर नहीं चलता उसे अपने आपको मानव कहलाने का अधिकार नहीं है। इसलिए उन्होंने विश्व कल्याण एवं मानव जाति के कल्याण के लिए मनुष्य मात्र को मानवता के असूलों पर चलने के लिए उकसाया, उत्साहित किया, और स्वयं मानवता के असूलों पर चलकर अनोखा उदाहरण प्रस्तुत किया।

मानवता के सिद्धान्त

परम दयाल बाबा फकीर चन्द जी महाराज द्वारा कहे गये अनेक वचनों में से (जो उन्होंने अपने सत्संगों एवं पुस्तकों में दिये) कुछ चुने हुए एवं क्रियात्मक सिद्धान्तों को नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है–

1.हमारे अन्दर जो जीवन शक्ति है वह वीर्य है उसकी रक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। इसकी रक्षा करने से मनुष्य के अन्दर बल, तेज और साहस की वृद्धि होती है। शारीरिक ब्रह्मचर्य के अतिरिक्त मानसिक ब्रह्मचर्य का पालन भी बहुत जरूरी है। सन्तान पैदा करने के लिए संभोग अवश्य

करना चाहिए परन्तु विषय वासना में फंसकर इस अमूल्य धनराशि को बरबाद करने से शरीर निर्बल, निस्तेज और उत्साह हीन हो जाता है, मन अशान्त रहने लगता है और समय आने पर अनेक बीमारियां घेर लेती हैं। अनचाहे गर्भ से न बच्चा सुखी रह पाता है और न ही उससे देश का कोई हित होता है।

2.शिवसंकल्प रखना या ऐसे विचार रखना जिससे अपना और दूसरों का भला हो। अनेक बार आदमी कमजोर, निराशावादी या भययुक्त विचार उठाता है जिसका परिणाम यह होता है कि ये विचार ब्रह्माण्ड में जाकर अपना मण्डल बना लेते हैं और वहां इक्ट्ठा होते रहते हैं और समय आने पर उसी प्राणी या उस जैसे अन्य प्राणियों पर प्रभाव डालते हैं, जिसका परिणाम बड़ा भयंकर होता है। न्यूटन के सिद्धांत के द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि यदि हम हवा में हाथ भी हिलाते हैं तो इसकी गति सितारों तक जाकर वापस वहीं आ जाती है जहां से गति शुरू हुई थी। इसलिए यदि संसार में मनुष्य सुख–शान्ति से रहना चाहता है तो उसे शिव संकल्प रखना चाहिए। न किसी का बुरा सोचो, न बुरा करो, न बुरा सुनो। आशावादी विचारों का रखना ही शिवसंकल्प करना कहलाता है। संकल्प का संबंध मन से होता है। जब मन शुभ संकल्प रखेगा तो उसकी इन्द्रियां भी उसके वश में रहेंगी। इसलिए जो भी इस संसार में सुखी रहना चाहता है उसे सच्चे दिल से अपना सुधार करना चाहिए और इसके लिए शुभ संकल्प रखना बहुत जरूरी है।

3.मनुष्य को समय का सदुपयोग करना चाहिए तथा समय को बरबाद नहीं करना चाहिए क्योंकि जो क्षण बीत गया है उसे किसी भी कीमत पर वापिस नहीं लाया जा सकता। तुम देखते हो कि प्रकृति की सारी शक्तियां निरंतर अपने काम में लगी रहती हैं जैसे सूर्य, वायु, सितारे आदि। इसी प्रकार मनुष्य को भी सदा कार्य में व्यस्त रहना चाहिए। बेकार आदमी का मन चंचल रहता है और वह व्यर्थ की बातें सोचता रहता है। काम में व्यस्त रहना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि आजकल मंहगाई का युग है अतः इसमें जीविका कमाना और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए साधन

जुटाना इतना आसान नहीं है और दूसरों पर निर्भर रहने से मनुष्य जीवन भर दुखी और अशान्त रहता है।

4.मनुष्य को संयमी, संवेदनशील और क्षमाशील बने रहने का निरंतर प्रयास करते रहना चाहिए। वह अपने मन–वचन–कर्म से किसी को कोई कष्ट या दुख न पहुंचाये। उसे सोचना चाहिए कि जब कटु वचन, निंदा और अपमान हमारा कलेजा फाड़ते हैं तो दूसरों को भी ऐसा ही महसूस होता होगा, यह सोचकर अपने व्यवहार में निरंतर परिवर्तन करते रहना चाहिए।

5.मनुष्य में सहनशक्ति का एक बहुत बड़ा गुण होता है जो आजकल बहुत कम दिखाई देता है। प्रकृति की समस्त शक्तियों में यह गुण मौजूद है। पृथ्वी पर, जल में, वायु में हम हर प्रकार का प्रदूषण तथा कूड़ा–करकट फेंकते रहते हैं परन्तु ये शक्तियां सब कुछ सहन करती रहती हैं। परन्तु मनुष्य की इच्छा के विरूद्ध तनिक भी कुछ हो जाता है तो वह अपना संतुलन खो बैठता है जिससे न सिर्फ उसको बल्कि उसके आस–पास के सभी लोगों को हानि होती है, अशान्ति पैदा हो जाती है। कबीर साहिब कहते हैं–

सहे कुशब्द वाद को त्यागे, छाडे गर्व गुमाना।
सतनाम ताही को मिलिहै, कहे कबीर हम जाना।।

6.हर इंसान को दूसरो की मदद करनी चाहिए क्योंकि वह स्वयं दूसरों का सहारा लेकर इतना बड़ा हुआ है तो उसका भी फर्ज बनता है कि वह भी दूसरों की मदद करे और उन्हें बढ़ने में सहायता दे। वैसे प्रकृति आपके सहारे की मोहताज नहीं है, वह तो किसी न किसी प्रकार जिसकी उसे सहायता करनी है करा ही लेगी परन्तु हमारे सुधार के लिए जो वह अवसर हमें प्रदान करती है उसे हम अपने अज्ञानवश गवां देते हैं, यदि हम दूसरों की सहायता करने से चूक जाते हैं। प्रकृति की समस्त शक्तियां निरंतर दूसरों की सहायता करने में लगी रहती हैं, हमें इसी से कुछ सीख लेनी चाहिए।

7.फकीर बाबा कहते थे कि घरों में शान्ति रखो, आपस में मिल–जुल कर रहो। भले ही तुम राम–राम न जपो, परन्तु किसी

का दिल मत तोड़ो। यदि तुम प्रेम से एक साथ नहीं रह सकते तो प्रेम के अलग–अलग रहो। क्योंकि जिस घर में कलह या मनमुटाव होता रहता है, उस घर में किसी न किसी प्रकार की मुसीबत का आना लाजमी है, उसे कोई टाल नहीं सकता।

8.मनुष्य को इमानदार रहना चाहिए अपने प्रति भी और दूसरों के प्रति भी, तभी उसे सुख–शान्ति मिल सकती है। जिस खाद्य पदार्थ या धन से हम अपना तथा परिवार का पालन– पोषण करते हैं यदि वह हक–हलाल का नहीं है, बिना परिश्रम किये हुए प्राप्त किया गया है या दूसरों की इच्छा के विरूद्ध जबरदस्ती लिया गया है या जिस पर हमारा अधिकार नहीं है और वह हमें मिल गया है तो उसे शुद्ध कमाई नहीं कहते। ऐसे धन के उपभोग से अस्थाई सुख भले ही मिल जाये परन्तु आगे चलकर यह हमारे लिए एवं परिवार के लिए दुख का कारण बनता है। इससे शारीरिक कष्ट, मानसिक अशान्ति एवं आत्मिक भ्रम घेर लेते हैं।

9.मनुष्य को अच्छे कर्म का अच्छा एवं बुरे कर्म का बुरा फल भोगना पड़ता है, इससे आज तक कोई भी नहीं बच सका न आगे बच सकता है। जैसी करनी वैसी भरनी हमेशा से चली आई है और आगे भी चलती रहेगी। हम दूसरों के साथ जैसा व्यवहार करते हैं वैसा ही हमारे साथ भी होगा इसके लिए तैयार रहना चाहिए–इसमें समय की कोई सीमा नहीं होती। आप आदर दोगे आपको आदर मिलेगा, गाली दोगे बदले में गाली मिलेगी, धन दोगे धन मिलेगा, प्यार दोगे प्यार मिलेगा, घृणा करोगे आप भी घृणा के पात्र बनोगे। अर्थात् मनुष्य जैसा व्यवहार दूसरों के साथ करता है उसके साथ भी वैसा ही व्यवहार होता है, यह प्राकृतिक नियम है। इसलिए कबीर साहिब ने कहते हैं.

दया राख धर्म को पाले, जग से रहे उदासी।
अपना सा जिव सबका जाने, ताही मिले अवनासी।।

परम दयाल जी महाराज ने स्पष्ट रूप से बताया कि जो धार्मिक कट्टरता आज विभिन्न सम्प्रदायों के बीच में शीतयुद्ध के रूप में सुलग रही है यह मनुष्य का असली धर्म नहीं है। उन्होंने धर्म की

आधुनिक एवं वैज्ञानिक व्याख्या देते हुये कहा कि मनुष्य का सच्चा धर्म वह है और वही धार्मिक मनुष्य है जो अपनी जिम्मेदारियों को और अपने कर्त्तव्यों को इस दुनियां में रहते हुये भली प्रकार निभाता है। जैसे मां–बाप का धर्म, भाई का धर्म, राजा का धर्म, प्रजा का धर्म, पति का धर्म, पत्नि का धर्म, मनुष्य का मनुष्य के प्रति धर्म, पड़ोसी का पड़ोसी के प्रति धर्म इत्यादि–इत्यादि। इसको थोड़ा सा विस्तार से देखें–

1– एक जवान लड़का है उसको परमार्थ का शौक हो गया। उसके घर में बूढ़ी मां है, जवान पत्नि है, छोटे–छोटे बच्चे हैं जिनका कोई सहारा नहीं है। यदि वह उन्हें छोड़कर सन्यासी हो जाता है तो उसे धार्मिक नहीं कह सकते क्योंकि उसने अपने कर्त्तव्यों का, अपने धर्म का पालन नहीं किया।

2– दूसरा धर्म यह है कि हमको अपनी रोजी–रोटी स्वयं कमानी चाहिए। हमें प्रकृति ने हाथ–पैर दिये हैं, शरीर दिया है, मन बुद्धि आदि दी हैं तो हमारा कर्त्तव्य है कि हम इनसे काम लें और अपनी रोटी–रोजी स्वयं कमायें। जो साधु लोग मांगकर खाते हैं वे धार्मिक नहीं कहे जा सकते क्योंकि वे दूसरों पर निर्भर रहते हैं। जो स्त्री पति और बच्चों का ख्याल नहीं करती और सत्संग में जाती है वह भी धार्मिक नहीं है। ऐसे लोगों को कभी शान्ति नहीं मिल सकती, सत्य का साक्षात्कार करना तो बहुत दूर की बात है।

3– तुम्हारे बच्चे हैं वे गलती करते हैं, तुमको क्रोध आता है और तुम उन्हें पीटने लगते हो, जबकि अधिकतर मामलों में तो बच्चे को यह भी मालूम नहीं होता कि उसका कसूर क्या है और उसे क्यों पीटा जा रहा है? उस समय तुम्हारे अन्दर दया का भाव गुम हो जाता है। इसी प्रकार अन्य मामलों में भी समझो। इसलिए गृहस्थ में रहते हुए अपने रिश्तेदारों की गलतियों को भूल जाना, उनको क्षमा करना सीखो, यही दया है। तुम्हारे घर में पुत्र–वधु आई है, सास उसे ताने देती है और फिर कहती है कि मैं धार्मिक हूं, तो यह बात सही नहीं है। फिर गलती किससे नहीं होती? इंसान तो गलतियों का पुतला है। कहते हैं कि हर इंसान अपनी गलतियों को

तो माफ कराना चाहता है लेकिन वह स्वयं दूसरों की गलतियों को माफ नहीं करना चाहता इसलिए उसकी भी गलती माफ नहीं होती (यहां भले ही ऐसा लगे कि उससे कोई गलती नहीं हुई या भगवान के सामने रोने से उसकी गलती माफ हो गई लेकिन काल–पुरूष के दरबार में ऐसा नहीं होता)। गृहस्थियों को तो दया करने का अवसर हर रोज बहुतायत से मिलता है, परंतु साधु–महात्माओं को ऐसे अवसर कम ही मिलते हैं।

4– धर्म का पालन करने का अर्थ यह है कि आप अपने कर्म निष्काम भाव से करते रहो, अपने कर्त्तव्य निष्काम भाव से निभाते रहो, उसके परिणाम की इच्छा या उस क्रिया की प्रतिक्रिया की परवाह किए बिना।

5– हम अपने ही विचार से या अपनी स्वार्थी तंग–दृष्टि से किसी को बुरा समझ लेते हैं जबकि शायद वह उतना बुरा नहीं है जितना कि हमने सोच लिया है। यदि सास ने बहु को बुरा समझ लिया है तो भले ही बहु दिलो–जान से सास की सेवा करे तो भी सास को उसमें बुराई ही नजर आयेगी। यही बात अन्य सभी संबंधों में भी लागू होती है। यह दृष्टिकोण ही हमारे दुखों का मुख्य कारण है।

6– पिछला समय गया जब परिवार में एक कमाता था और उसके पीछे 5–7 आदमी खाते थे। आज के युग में तो सभी कमाते हैं फिर भी भली प्रकार गुजारा नहीं होता। अतः ऐसी परिस्थितियों में यह जरूरी हो गया है कि हर आदमी अपनी रोटी स्वयं कमाये। लड़कों का धर्म है कि वे पढ़–लिख कर अपने मां–बाप की जरूरतों को पूरा करें और मां–बाप का भी धर्म है कि अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा देकर उन्हें उनके पैरों पर खड़े होने लायक बनायें। यदि मां–बाप लड़के की कमाई में से दान–पुण्य करते हैं तो यह गलत है, यह बच्चे की आमदनी पर अनुचित दबाव डालता है।

7– तुम अपने घरों में अपने बच्चों से, अपने परिवार वालों से प्रेम रखो, उनको ईश्वर का रूप मानकर उनकी निष्काम सेवा करो; इससे तुम्हारा घर स्वर्ग बन जायेगा और तुम्हारा मन शान्त हो

जायेगा। यदि आपके किसी संबधी को कोई आर्थिक तंगी है तो उसकी खुले मन से सहायता करो बिना कोई एहसान जताये, इसका इतना पुण्य आपको मिलेगा जितना कि 10 यज्ञों का भी नहीं मिलता।

8– अपने निजी स्वार्थ के लिए किसी के साथ हेरा–फेरी मत करो, चारसौबीसी मत करो। किसी असाहय की यदि मदद नहीं कर सकते तो उसे झिड़की भी मत दो, उसका निरादर मत करो, उसे मत सताओ क्योंकि प्रकृति को यह मंजूर नहीं है; ऐसे व्यक्ति की बद्दुआयें तुम्हें बरबाद कर देगीं। किसी जरूरत मंद की सहायता जितनी तुमसे बन पड़े अपने मन, वचन, वाणी, धन और कर्म से पूरी करो उसकी आशीष से तुम्हारी बड़ी से बड़ी मुसीबतें भी दूर हो जांयेगी।

9– मानव जाती अपनी वासना के कारण संसार में आई है। असली वासना तो उस आदि कर्त्ता की है जिसने यह सृष्टि रची है और हम सब उसी वासना के आधीन होकर काम करते हैं। उसने इच्छा की 'मैं एक हूं, अनेक हो जाऊँ' और वह अनेक बन गया। इसी प्रकार जैसी हमारी वासना होती है वैसा ही हमारा जीवन बन जाता है। अतः हमें अपनी वासना को शुद्ध एवं नेक रखना चाहिए और इसकी तमीज या तरीका किसी संतसत्गुरू के सत्संग में ही मिलता है। जिसकी वासना में तीव्रता एवं गहनता या तड़फ जितनी ज्यादा होती है, उसकी वासना को पूरा करने के लिए प्रकृति उसे वहां पहुंचा देती है जहां उसकी पूर्ति का सामान मौजूद रहता है। अर्थात् उसकी वासना की पूर्ति के लिए प्रकृति ऐसी परिस्थितियां पैदा कर देती है कि उसकी इच्छा की पूर्ति हो जाये। इससे उसे शान्ति मिलती या नहीं इससे इच्छा पूर्ति का कोई लेना देना नहीं है। और सब इच्छाये तो किसी की भी पूरी नहीं होतीं और जो इच्छायें पूरी होती हैं वे अपने साथ अनेक दुख और नई इच्छायें साथ लेकर आती हैं।

10– हमारी सब वासनाऐं पूरी क्यों नहीं होतीं इसका मुख्य कारण यह है कि हमारी इच्छाऐं इतनी अधिक हैं कि एक दिन की इच्छा की पूर्ति होने में ही कई जन्म लग सकते हैं अतः पूरे जन्म

की इच्छाओं की पूर्ति कराने के लिए प्रकृति ने आवागमन का चक्र चलाया है जो अनादि काल से चला आ रहा है और अनन्त काल तक चलता रहेगा। यदि किसी की इच्छा राजा बनने की है तो वह राजा जरूर बनेगा लेकिन कितने युगों तक उसको इंतजार करना पड़ेगा उसका अंदाज नहीं लगाया जा सकता।

अतः बाबा फकीर इस बात पर बहुत जोर देते थे कि अपनी इच्छाओं को सीमित रखो क्योंकि गृहस्थी में रहकर इच्छा–रहित नहीं रहा जा सकता। इसलिए जो स्वयं के लिए बहुत जरूरी और दूसरों को नुकसान पहुंचाने वाली न हो ऐसी शुभ इच्छा जरूर करो और उसे इतना तीव्र करो कि प्रकृति उसे पूरा कराने के लिए शीघ्र ही प्रबंध करे। बाकी इच्छाओं को दबा दो या अपने इष्ट को समर्पित कर दो। इच्छायें वही पूरी होती हैं जिनके बारे में हमें पूरा विश्वास होता है और अपने इष्ट पर अटूट श्रद्धा होती है साथ ही उसे पूरा करने के लिए दृढ़ संकल्प और साहस व उत्साह जुड़ा होता है वरना तो साधारण सी इच्छा भी इच्छा–शक्ति के अभाव में वर्षों तक अधूरी पड़ी रहती है।

परमसंत बाबा फकीर कहते थे कि सच्ची इन्सानियत ही रूहानियत है बल्कि इंसानियत तो रूहानियत से भी बढ़कर है। मानवता ही इस युग का सच्चा धर्म है। वे कहते थे कि यदि तुम सुख–शान्ति से रहना चाहते हो तो इन्सान बनो– न हिन्दू बनो, न मुसलमान बनो। यदि मानव मानवता के ऊपर बताये हुए रास्ते पर नहीं चलता तो मानव अपने पूर्वकृत विचारों के कारण आने वाली तबाही, विनाश से बच नहीं सकता। क्योंकि कटुता, वैमन्स्य, घृणा–द्वेष के जो विचार ब्रह्माण्ड में पंहुचे हुये हैं वे सुनामी, कटरीना, बाढ़, सूखा, अकाल, महामारी आदि के रूप में कहर बन कर बरसेगें और जरूर बरसेगें। इनसे वही बचा रहेगा जो इंसानियत के रास्ते पर चलेगा वरना सभी इस चक्की में पिस जायेंगे।

इस चक्की का इशारा कबीर साहिब भी अपने समय में दे गये हैं। दरअसल बात यह है कि जब भी इस प्रकृति में असंतुलन पैदा हो जाता है तो कालपुरूष समय–समय पर इस 'सत्यंशिवंसुंदरं' प्रकृति में संतुलन स्थापित करने के लिए महापुरूषों को अवतरित करता रहता है और वे समय की मांग के अनुसार अधर्म का नाश करके और धर्म की स्थापना करके चले जाते हैं। जब कबीर साहिब का अवतार हुआ (अवतार से मतलब उस महान आत्मा

के अवतरित होने से है जो इस प्रकृति में सामंजस्य स्थापित करने के लिए पृथ्वी पर अवतरित होता है–वह किसी धर्म या सम्प्रदाय से जुड़ा नहीं होता; (हां स्वार्थी लोग उसके जाने के बाद धर्म या सम्प्रदाय को उसके नाम से जोड़ देते हैं यह अलग बात है) उस समय वर्ण–भेद और हिन्दु–मुस्लिम वैर भाव जोरों पर था तो उन्होंने समय की मांग के अनुसार कहा–

चलती चक्की देखकर दिया कबीरा रोय।
दो पाटन के बीच में साबुत बचा न कोय।।

तो अपने समय में कबीर साहिब ने इशारा किया था कि अच्छाई और बुराई, जीवन और मृत्यु चक्की के दो पाट हैं इनमें सभी पिसे जा रहे हैं और साथ में घुन भी पिस जाते हैं जिनका उन पिसने वालों से सीधा कोई लेना–देना नहीं होता। इससे बचने का उपाय उन्होंने बताया कि या तो कोई उस कीली को उखाड़ फेंके जिसके सहारे चक्की चल रही है (यह संभव नहीं है क्योंकि प्रकृति के चक्र को रोकना शायद स्वयं काल–पुरूष के वश में भी नहीं है) या फिर इस चक्की के आघात से बचने के लिए उस कीली के निकट बैठ जाय जिसके सहारे यह चक्की चल रही है। इस श्रेणी में शरणागत उपासक आते हैं। इसका तरीका यह भी है कि चक्की चलाने वाले को अपना हृदय दे दो और उससे संबंध जोड़ लो तो बच जाओगे। इस प्रकार कबीर साहिब ने तबाही से बचने के लिए कर्मयोग (कीली उखाडना), भक्तियोग (कीली के समीप बैठना) और ज्ञान योग (चक्की चलाने वाले से संबंध जोड़ना) बताया।

वही बात वर्तमान समय में अवतार लेकर आये परम दयाल बाबा फकीर चन्द जी महाराज ने वैज्ञानिक आधार पर संसार को आने वाली विपदा से बचने का रास्ता और भी सरल ढ़ंग से बताया। जब भारत और पाकिस्तान का बंटवारा हुआ तो उसमें हुए खून–खराबे को देखकर वे बहुत व्यथित हुए और आठ घन्टे की अखण्ड समाधि के बाद वह इस नतीजे पर पंहुचे कि यदि मनुष्य मानवता के सिद्धान्तों पर चले तो वह सुखी रहकर परम शान्ति प्राप्त कर सकता है और इन्हीं सिद्धान्तों पर चलकर आवागमन से भी छुटकारा पा सकता है। इसलिए उन्होंने मानवता धर्म का प्रचार एवं प्रसार जीवन पर्यंत किया और अपने आश्रम का नाम भी मानवता मंदिर रखा ताकि इसमें कोई साम्प्रदायिकता न झलके।

गुरूदेव सबका कल्याण करें!

विशेष सूचना–1

सभी श्रद्धालु एवं महानुभावों को अति हर्ष के साथ सूचित किया जा रहा है कि परमसंत हुजूर पुष्कर दयाल जी की प्रेरणा से और उनके मार्गनिर्देशन एवं अध्यक्षता में धुरपद धाम दुर्गापुर का प्रबंधन सुचारू रूप से संचालन हेतु 'अखण्ड मानवता ट्रस्ट, दुर्गापुर' के नाम से एक ट्रस्ट का रजिस्ट्रेशन (पंजीकरण) विधिवत रूप से जिला मुख्यालय पलवल में मई 2016 में करा दिया गया है। इसके साथ ही आई0 डी0 आई0 बैंक (IDBI Bank) पलवल में एक नया चालू खाता (Current Account) भी जून 2016 में खोल दिया गया है। इसका खाता संख्या IFC Code है। जो श्रद्धालु सज्जन आगे से मंदिर को आर्थिक सहायता बैंक के माध्यम से धन प्रेषित करके करना चाहते हैं वे कृपया उपरोक्त नये खाते में ही पैसा भेजने का कष्ट करें। पुराना खाता जो ओरियंटल बैंक आफ कामर्स फरीदाबाद में है धीरे–धीरे कुछ समय बाद बंद कर दिया जायेगा।

इस समय धुरपद धाम में अतिरिक्त कमरों का निर्माण कार्य तीव्र गति से चल रहा है। जो सज्जन अपने या अपने किसी संबंधी के नाम से कमरा बनवा चाहें या सामान्य रूप से निर्माण कार्य मे आर्थिक मदद करना चाहे वह जनरल सेक्रेटरी धुरपद धाम, दुर्गापर से टेल0 सं0 08685037140 पर संपर्क कर सकते हैं। धन्यवाद।

जनरल सेक्रेटरी।

सूचना –2

जिन श्रद्धालुओं ने वर्ष 1016 में धुरपद धाम, दुर्गापुर को आर्थिक सहायता प्रदान की है उनकी सूचि नीचे प्रस्तुत की जा रही है। अखण्ड मानवता ट्रस्ट, दुर्गापुर इस सभी श्रद्धालुओं का धन्यवाद देता है और आशा करता है कि ये श्रद्धालु तथा अन्य सज्जन भविष्य में भी इसी प्रकार आर्थिक सहायता प्रदान करते रहेंगे।

1. आचार्य श्री तेजेन्द्र मणि गुप्ता, भीलवाड़ा रू0 100,000
2. श्री रूपचन्द देवड़ा, हैदराबाद रू0 100,000
   (वार्षिक अनुदान–वर्ष के मुख्य चार भण्डारों हेतु)
3. श्री पवन मल्हन होशियारपुर रू0 21,000
   (वार्षिक अनुदान श्री चरणदास मल्हन ट्रस्ट की ओर से)
4. आचार्या श्रीमति जयश्री, नोयड़ा रू0 36,000
5. श्री आर0 एस0 दिवेदी, अहमदाबाद रू0 31,000
6. आचार्य श्री गुरू प्रसाद, दुर्गापुर रू0 50,000
7. आचार्य श्री के0 एल0 गौड मुरैना (भवन निर्माण हेतु)
   रू0 10,000
8. श्री विवेक गुप्ता, गाजियाबाद (वार्षिक अनुदान)
   रू0 24,000 (प्रतिमाह के रूप में)
9. श्री विवेक गुप्ता, गाजियाबाद (वार्षिक अनुदान)
   रू0 4000/ (व्यापार का लाभांश)
10. श्रीमति मंजू शर्मा पुत्र वधु श्री मंगल देव जी शर्मा
    रू0 12000 (वार्षिक अनुदान प्रति माह के रूप में)
11. आचार्या निर्मला कुमार (तथैव) रू0 12000
12. आचार्य श्री के0 एल0 गौड (तथैव) रू0 12000
13. श्री पंकज बंसल, गाजियाबाद (तथैव) रू0 12000

14. श्री अक्षय कोहले पुत्र श्री अरून कोहले, दिल्ली
    रू0 50,000
15. श्रीमति आशा, लंदन रू0 25,000
16. श्रीमति त्यागी श्री संदीप त्यागी जी, नोयड़ा
    की माताश्री रू0 5,000
17. श्री राधाकृष्ण, जिन्द रू0
18. श्रीमति वंदिता बंसल पत्नी श्री पंकज बंसल
    रू0 6,000
19. श्री अडलखा, गुडगांवां रू0 1,100
20. श्रीमति कंचन लांम्बा, फरीदाबाद रू0 23,000

सूचना –3

वर्तमान में निम्न महानुभवों ने अपने स्रोत से प्रति व्यक्ति रू0 185000 (रूपये एक लाख पिचासी हजार) धुरपद धाम दुर्गापुर को देकर एक–एक कमरे का निर्माण कार्य करवाने में सहयोग प्रदान किया है।

1. श्री राजीव गंजू , कनाडा, अपनी माताश्री संतोष गंजू की यादगार में एक कमरा बनवा रहे हैं।

2. श्रीमति दुलारी शर्मा अपने पति श्री मंगल देव शर्मा जी की यादगार में एक कमरा बनवा रही हैं।

3. श्री विवेक गुप्ता, गाजियाबाद अपनी माताश्री चित्रा गुप्ता के धाम पर रहने हेतु एक कमरा बनवा रहा है।

4. श्री मनोज कुमार अग्रवाल पुत्र श्री जी0 एल0 जिंदल देहली अपने रहने के लिए एक कमरा बनवा रहे हैं।

5. श्रीमति , पत्नी स्व0 श्री अमेरिका निवासी अपने पति श्री की यादगार में एक कमरा बनवा रही हैं।

आचार्य श्री आनन्द प्रकाश त्यागी, गाजियाबाद–मृत्यु के प्रति विचार

मान बड़ाई ईर्ष्या सुख सम्पत्ति परिवार।
जीवन भर उलझा रहा, निकल सका न बाहर।। 1।।
जग को अपना मान कर, किया कभी न ख्याल।
राग रंग में खो दिया, सार जीवन काल।। 2।।
काल बुलाया भेजिया, उड़ गये मेरे होश।
साथ न मेरे कुछ चले, जिन पर था मदहोया।। 3।।
मृत्यु द्वार पर आ गयी, पकड़ी गर्दन यमराज।
आंख मेरी पथरा गयी, बन्द हुयी आवाज।। 4।।
काल पकड़ कर ले चला, रह गये सब अरमान।
छोड़ चला सबको यहीं, जिन का था अभिमान।। 5।।
मृत देह को देखकर, रोवे सब परिवार।
जल्दी से अब ले चलो, कर रहे रिश्तेदार।। 7।।
करी तैयारी चलन की, मेरा सजा विमान।
अन्तिम क्रिया कर्म का ले आये सामान।। 8।।
अरथी पर अब लिटा दिया, करा मुझको स्नान।
ऊपर से चादर ढकी, सबसे आलीशान।। 9।।
कंधो पर लेकर चले, मेरा अन्तिक वाहन।
तेजी से चलते हुये, पहुंच गये शमशान।। 10।।
चिता चिनी शमशान में, कर लक्कड़ का ढेर।
आग लगा दी बेटे ने, करी न कुछ भी देर।। 11।।
जिस बेटे का जीवन भर, रहा मुझे अभिमान।
उसने ही सिर फोड़ दिया, किया न कुछ भी ध्यान।। 12।।
थोड़ी देर में हो गयी, तन की जलकर राख।
जिस तन के बल पर रही, जीवन भर मेरी धाक।। 13।।
छोड मुझे शमशान में, चल दिये मुझसे दूर।
सब कहते हुये जा रहे, भाई मरना पड़े जरूर।। 14।।

सब चर्चा मेरी करे, गिन कर गुरू और दोष।
कोई हंसे रोवे कोई, किसी को आवे रोष।। 15।।
सुनकर चर्चा को मेरी, मन को आवे जोश।
बिन तन के मन क्या करे, आये ठिकाने होश।। 16।।
हुआ ज्ञान मन को मेरे, अटल यहीं है सत्य।
नश्वर है संसार सब, रिश्ते सभी असत्य।। 17।।
'आनन्द' इस संसार में, मौत को रखना याद।
नहीं सुनेगा कोई तेरी, बिन सद्गुरू फरियाद।। 18।।

आनन्द प्रकाश त्यागी
16ए, वसुंधरा, गाजियाबाद यू0पी0

श्रीमति सविता वत्स पुत्रवधु आचार्य श्री गुरू प्रसाद, दुर्गापुर ने यह भजन लिखकर दिनांक 20.06.16 को महाराज जी को धाम पर सुनाया जो उन्हें बहुत पसंद आया इसलिए इसे यहां छापा गया है।

सतगुरू मोरे द्वारे आये खुशबू खुशबू फैली है।
चलने लगी पवन बरसने लगे रंग,
कितनी सुदर छवि आई है।
सतगुरू मोरे द्वारे आये खुशबू खुशबू फैली है।
निअर्थ था मेरा निरस जीवन,
पतझड–2 था ये मेरा मन।
सूखे में सावन आया, पतझडत्र में बसंत
कितनी सुदंर छवि छाई है।
सतगुरू मोरे द्वारे आये खुशबू खुशबू महकी है।
चलने लगी पवन बरसने लगे रंग
कितनी सुंदर छवि आयी है।

सविता वत्स, दुर्गापुर

धुरपद धाम में आगामी सत्संग सूचना

तिथि एवं कार्य–क्रम

क्र.स.	दिनांक	समारोह विवरण	सतसंग का समय
1.	3 अक्टूबर 16 सोमवार	हुजूर शब्दानन्द जी महाराज का जन्म दिवस	प्रातः 10 से 1 वजे तक
2.	10 अक्टूबर 16 सोमवार	दशहरा उत्सव	सांय 7 से 9 बजे तक
3.	11 अक्टूबर 16 मंगलवार	दशहरा उत्सव	प्रातः 10 से 1 बजे तक
4..	18 नवम्बर 16 शुक्रवार	हूजूर परम दयाल जी महाराज का जन्म दिवस	प्रातः 10 से 1 बजे तक
5.	25 दिसम्बर 16	शीत कालीन सतसंग	प्रातः 10 से 1 बजे तक
6.	23 फरवरी 17 गुरूवार	हूजूर मानव दयाल जी महाराज का वैभव दिवस	प्रातः 10 से 1 बजे तक
7.	13 अप्रेल 17	वैसाखी सतसंग	प्रातः 10 से 1 बजे तक

स्वामित्व–अखण्ड मानवता ट्रष्ट, दुर्गापुर, पलवल, हरियाणा
पता– हथीन रोड़, दुर्गापुर, जिला पलवल, हरियाणा 121102
संपादक मंडल– श्री प्रेम सुख, श्रीमति मंजू शर्मा
मुद्रक–पी0 एस0 प्रींटर्स बल्लभगढ़ जिला फरीदाबाद हरियाणा
प्रकाशक–जनरल सेक्रेटरी, अखण्ड मानवता ट्रष्ट, दुर्गापुर
पलवल–हथीन रोड़, दुर्गापुर, जिला पलवल,
हरियाणा 121102 फोन न0 09991484747, 08685037140

ट्रस्ट अपने पूर्व व वर्तमान संत सत्गुरूओं के विचारों के प्रति समर्पित है। शेष लेखकों के विचार व्यक्तिगत हैं, उनसे सहमति अनिवार्य नहीं है।

Visit us on: w.w.w.akhandmanavtadham.in